॥ श्रीः ॥



पराशरस्मृति

अर्थात्

(धर्मशास्त्रीय [illegible]राशरी)

सरल, सुबोध भाषाटीका सहित

जिसको

श्रीयुत शिवलाल गणेशीलाल ने

स्वकीय "लक्ष्मीनारायण" यन्त्रालय में

मुम्बई

टाइपसे मुद्रित कराकर प्रकाशितकिया.

MORADABAD.

सन् १८९८ ई०



॥ श्रीगणेशायनमः ॥

अथ

॥ लघुपाराशरीस्मृतिप्रारंभः ॥

अथातो हिमशैलाग्रे देवदारुवनालये । व्यास मेकाग्रमासीन मपृच्छन्नृषयःपुरा ॥ १ ॥ मानुषाणांहितंधर्मं वर्तमाने कलौ युगे । शौचाचारं यथावच्च वद सत्यवतीसुत ॥ २ ॥ तच्छ्रुत्वा ऋषिवाक्यंतु सशिष्योग्न्यर्कसन्निभः । प्रत्युवाचमहातेजाः श्रुतिस्मृतिविशारदः ॥ ३ ॥ न चाहंसर्वतत्वज्ञः कथंधर्मंवदाम्यहम् । अस्मत्पितैव पृष्टव्य इतिव्याससुतोऽवदत् ॥ ४ ॥ ततस्ते ऋषयःसर्वे धर्मतत्वार्थकांक्षिणः । ऋषिंव्यासंपुरस्कृत्य

परब्रह्मदेवर्षिगण गुरु चरणन शिर नाय ।
पाराशरि भाषा करौं विधि हरि हर उरलाय ॥ १ ॥

पूर्व कालमें हिमाचलके शिखरपर देवदारुके तरुवरों से अलंकृत वनके विषय पवित्र स्थान में एकाग्र चित्त बैठेहुए श्रीव्यासजी महाराजसे ऋषियों ने प्रश्नकिया ॥ १ ॥ भोःश्री व्यासजी ! कलियुग के वर्तमान होने पर जो धर्म, शौच, तथा आचार मनुष्यों को हितकारी है वह यथा वत् (विधि पूर्वक) हमसे कहिये ॥ २ ॥ तदनंतर शिष्यों सहित श्रुति स्मृति के यथार्थ जानने वाले महातेजस्वी अग्नि सूर्य के समान प्रकाशमान श्रीव्यासजी ऋषियों के बचनको सुनकर बोले ॥ ३ ॥ मैं सब धर्मों के तत्त्वोंको नहीं जानता किस प्रकार धर्मकहूं अतएव हमारे पितासे पूछना चाहिये इसप्रकार व्यासजीने कहा ॥ ४ ॥ तब धर्म तत्वके जानने की इच्छा करने वाले वे

गताबदरिकाश्रमम् ॥ ५ ॥ नानापुष्पलताकीर्णं फलपुष्पैरलं कृतम् । नदी प्रस्रवणोपेतं पुण्यतीर्थोपशोभितम् ॥ ६ ॥ मृग पक्षिनिनादाढ्यं देवतायतनावृतम् । यक्षगंधर्वसिद्धैश्च नृत्य गीतैरलंकृतम् ॥ ७ ॥ तस्मिन्नृषिसभामध्ये शक्तिपुत्रंपराश रम् । सुखासीनंमहातेजा मुनिमुख्यगणावृतम् ॥ ८ ॥ कृतां जलिपुटोभूत्वा व्यासस्तुऋषिभिःसह । प्रदक्षिणाभिवादैश्च स्तुतिभिःसमपूजयत् ॥९॥ अथसंतुष्टहृदयःपराशरमहामुनिः। आहसुस्वागतंब्रूहीत्यासीनोमुनिपुंगवः ॥ १० ॥ कुशलं सम्यगित्युक्त्वा व्यासःपृच्छत्यनंतरम् ॥ यदिजानासिमेभक्तिं स्नेहाद्वाभक्तवत्सल ॥ ११ ॥ धर्मंकथयमेतातअनुग्राह्योह्यहंतव श्रुतामेमानवाधर्मा वाशिष्ठाःकाश्यपास्तथा ॥ १२ ॥ गार्गीया गौतमीयाश्च तथा चोशनसास्मृताः । अत्रेर्विष्णोश्चसंवर्ता दक्षादंगिरसस्तथा ॥१३॥ शातातपाच्चहारीताद्याज्ञवल्क्यात्त

सब ऋषि व्यासजी को आगे करके वदरिकाश्रमको गये ॥ ५ ॥ वह आश्रम नाना प्रकार के पुष्पोंकी लताओंसे परिपूर्ण फल पुष्पोंसे अलंकृत नदी और झरनों से विभूषित पवित्र तीर्थोंसे शोभित ॥ ६ ॥ मृगऔर पक्षियों के शब्दोंसे पूरित देवमन्दिरों से आवृत, यक्ष और गंधर्वोंके नृत्य गानसे शोभित और सिद्ध गणोंसे अलंकृत था ॥७॥ उस आश्रममें ऋषियोंकी सभाके विषय मुख्य मुनि गणोंके मध्यमें सुख पूर्वक बैठे हुए शक्ति ऋषिके पुत्र मुनिबर पराशरजीका महातेजस्वी ॥ ८ ॥ व्यासजीने ऋषियों सहित हाथ जोड़ प्रदक्षिण अभिवादन और स्तुति पूर्वक पूजन किया ॥ ९ ॥ तदनंतर संतुष्ट है हृदय जिनका ऐसे महा मुनि पराशरजी बोले कि तुम भली प्रकार कुशल पूर्वक आये ॥ १० ॥ कुशल प्रश्न के अनन्तर सब प्रकार कुशल है ऐसा कहकर व्यासजी ने पूछा कि हे भक्तवत्सल यदि आप मेरी भक्ति जानते हैं तो या मेरे स्नेह से ॥ ११ ॥ हे तात! स्नेह पूर्वक मुझ से धर्मों का वर्णन कीजिये क्योंकि मैं आप का कृपापात्र हूं अतएव आप को मुझ पर अवश्य कृपा करनी चाहिये मैंने स्वायंभुव मनु, वशिष्ठ, कश्यप ॥ १२ ॥ तथा गर्गाचार्य गौतम, शुक्राचार्य, अत्रि तथा विष्णुऋषि, संवर्त, दक्ष, अंगिरा ॥ १३ ॥

थैवच। आपस्तंवकृताधर्माः शंखस्यलिखितस्यच ॥ १४ ॥ कात्यायनकृताश्चैव तथाप्राचेतसान्मुनेः। श्रुता ह्येतेभव त्प्रोक्ताः श्रौतार्था मेन विस्मृताः ॥१५॥ अस्मिन्मन्वंतरेधर्माः कृतत्रेतादिकेयुगे। सर्वे धर्माः कृतेजाताः सर्वेनष्टाः कलौयुगे ॥ १६ ॥ चातुर्वर्ण्यसमाचारं किंचित्साधारणं वद। चतुर्णामपिवर्णानां कर्तव्यं धर्मकोविदैः ॥ १७ ॥ ब्रूहिधर्मस्वरूपज्ञ सूक्ष्मंस्थूलंचविस्तरात्।व्यासवाक्यावसानेषु मुनिमुख्यःपराशरः ॥१८॥ धर्मस्यनिर्णयंप्राह सूक्ष्मंस्थूलंचवि स्तरात् ॥ १९ ॥

वक्ष्यमाणधर्मतत्व ग्रहणायश्रोतृसावधानतांविधत्ते ॥

श्रृणुपुत्रप्रवक्ष्यामि श्रृण्वंतुमुनयस्तथा। कल्पेकल्पेक्षयः सत्याब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥२०॥ श्रुतिस्मृतिसदाचार निर्णे

तथा शातातप, हारीत, याज्ञवल्क्य, आपस्तंव, तथा शंख, लिखित ॥ १४॥ कात्यायन, वाल्मीकि आदि ऋषियों के कहेहुए धर्मशास्त्र और आप के कहे हुए वेदोक्त धर्म श्रवण किये हैं वे संपूर्ण धर्म मुझ को विस्मरण नहीं हुए हैं ॥१५॥ किंतु इस मन्वंतर के विषय कृत युग और त्रेतादि युगों के जो २ धर्म थे उन २ युगों में शक्ति विशेष होने के कारण उन उन धर्मों का वर्ताव रहा और अब कलियुग में शक्ति की हानि होने के कारण वे सम्पूर्ण धर्म लुप्त होगये ॥१६॥ अतएव चारों वर्णो का पृथक् २ मुख्य धर्म तथा चारों वर्णो का मिश्रित धर्म [सत्य वोलनाचोरी नकरना पर स्त्रियोंको मातृवत् देखना, हिंसा नकरना इत्यादि धर्म जो सब वर्णोंको कर्तव्यहैं उनको मिश्रित धर्म कहतेहैं वर्णन कीजिये ॥ १७ ॥ भोःधर्म स्वरूपके जानने वाले चारों वर्णोंमें धर्मके जानने वालों करके करने योग्य जो सूक्ष्म और स्थूल धर्महैं उनका विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये व्यासजी के वचन के अनंतर मुनिवर पराशरजी ॥ १८ ॥ सूक्ष्म और स्थूल धर्मोंका निर्णय विस्तार पूर्वक वर्णन करने लगे वक्ष्य माण धर्मोंका तत्व ग्रहण करनेके लिये श्रोताओंको सावधान होना चाहिये ॥ १९ ॥ हे पुत्र ! तथा हे मुनियों ! सुनो कल्प २ में प्रलय होताहै तथापि ब्रह्मा विष्णु शिव विद्यमान रहतेहैं और वे सर्वदा (सब कल्पोंकी आदिमें) श्रुति स्मृति और सदा चारका निर्णय करतेहैं

तारश्चसर्वदा। नकश्चिद्वेदकर्त्ताच वेदस्मर्ताचतुर्मुखः॥२१॥ तथैवधर्मान्स्मरतिमनुःकल्पांतरेंतरे। अन्येकृतयुगेधर्मास्त्रेतायांद्वापरेपरे॥२२॥ अन्येकलियुगेनृणां युगरूपानुसारतः(युगरूपानुह्रासतः इतिपाठांतरम्)॥तपःपरंकृतयुगे त्रेतायांज्ञानमुच्यते॥२३॥ द्वापरे यज्ञमेवाहु र्दानमेवकलौयुगे। कृतेतुमानवाधर्मास्त्रेतायांगौतमास्मृताः॥२४॥ द्वापरेशंखलिखिताः कलौपाराशरास्मृताः। त्यजेद्देशंकृतयुगे त्रेतायांग्राममुत्सृजेत् २५द्वापरेकुलमेकंतु कर्तारंतुकलौयुगे।कृतेसंभाषणादेवत्रेतायां स्पर्शनेनच॥२६॥ द्वापरेत्वन्नमादाय कलौपततिकर्मणा।

वेदका कर्ता कोईनहीं, ब्रह्माजी कल्प की आदिमें पूर्ववत् वेदको स्मरण करके मनु तथा ऋषियोंके द्वारा प्रकाशित करतेहैं॥ २१॥ और कल्प २ के विषय जो २ मनु होते हैं वेभी उसी प्रकार पूर्वकी नाईं धर्मों को स्मरण करके प्रवृत्त करते हैं। युगोंके अनुसारशक्तिकी वृद्धि और हानि के कारण कृत युग में मनुष्यों के धर्म और प्रकार के रहे त्रेतामें और प्रकार के और द्वापर में और प्रकार के रहे॥ २२॥ अब कलियुग में मनुष्योंकी शक्ति के अनुसार ऋषियों ने और प्रकारके धर्म वर्णन किये हैं। कृतयुगमें शक्ति विशेष होने के कारण तप श्रेष्ठ रहा त्रेता में ज्ञान॥ २३॥ द्वापर में यज्ञ की विशेषता रही, अब कलियुग में शरीरादिक की शक्ति न्यून होने के कारण केवल दान की अधिकता है। कृतयुग (सत्ययुग) में मनुजी के धर्म मुख्य रहे त्रेतामें गौतमके॥ २४॥ द्वापर में शंख और लिखित ऋषियों के कहे हुए धर्म मुख्य रहे और अब कलियुगमें पराशर के कहे हुए धर्म अत्यंत उपयोगी हैं। संसर्ग दोष लगने के कारण कृतयुग में पाप करनेवाले के देशकोभी त्याग देतेथे, त्रेतामें ग्रामको॥ २५॥ द्वापर में पाप करने वाले के कुल मात्रको छोडदेतेथे और अब कलियुग में केवल कर्ता को छोडते हैं। कृत युग में पापी के संभाषण ही सेपतित होजाता था त्रेतामें स्पर्श से॥ २६॥ द्वापर में अन्न लेकर पतित होताथा और अब कलियुग में कर्म करके पतित होता है। कृतयुग में तत्काल शाप लगता

कृतेतात्क्षणिकःशापस्त्रेतायांदशभिर्दिनैः ॥ २७ ॥ द्वापरेचैक मासेन कलौसंवत्सरेणतु । अभिगम्यकृतेदानं त्रेतास्वाहूयदी यते ॥ २८ ॥ द्वापरेयाचमानाय सेवयादीयतेकलौ । अ भिगम्योत्तमंदान माहूयैवतुमध्यमम् ॥ २९ ॥ अधमंयाच मानाय सेवादानंतुनिष्फलम् । जितोधर्मोह्यधर्मेण सत्यंचैवा नृतेनच॥ ३० ॥जिताश्चौरैश्चराजानः स्त्रीभिश्चपुरुषाजिताः सीदंतिचाग्निहोत्राणि गुरुपूजाप्रणश्यति॥ ३१ ॥कुमार्यश्च प्रसूयंते तस्मिन्कलियुगेसदा । कृतेत्वस्थिगताःप्राणास्त्रेतायां मांसमाश्रिताः ॥३२॥ द्वापरेरुधिरंचैवकलौ त्वन्नादिषुस्थिताः। युगेयुगेचयेधर्मास्तत्रतत्रचयेद्विजाः ॥३३॥ तेषांनिंदानकर्तव्या युगरूपाहितेद्विजाः । युगेयुगेतुसामर्थ्यं शेषंमुनिविभाषितम्॥

था त्रेता में दश दिन में ॥ २७ ॥ द्वापर में एक मासमें शापका फल होता था और अब कलियुग में वर्ष भर में शाप फलता है । कृतयुग में श्रद्धाकी अधिकता के कारण आप जाकर दान देते थे त्रेता में बुलायकर श्रद्धा पूर्वक देते थे ॥ २८ ॥ द्वापरमे याचना करने वाले को श्रद्धा करके देते थे और अब कलियुग में सेवा कराकर दान देते हैं । आपजाकर दानदेना उत्तम है बुलाकर देना मध्यम ॥ २९ ॥ याचना करनेसे देना निकृष्टदान है और सेवा कराकर दान देना निष्फल है । कलियुग में धर्मका अधर्मसे पराजय होजाताहै और सत्यका झूंटसे पराजय होताहै ॥ ३० ॥ राजाका बहुधा चोरोंसे पराजय होताहै और पुरुषोंका स्त्रियोंसे तिरस्कार होताहै कलियुग में अग्निहोत्र और गुरुपूजनादि नष्टप्राय होजाते हैं ॥ ३१ ॥ कलियुगमें कुमारीभी संतान उत्पन्न करतीहै कृतयुग में प्राण अस्थि गतथे और त्रेतामें मांसके आश्रय रहे ॥ ३२ ॥ द्वापरमें प्राण रुधिरके आश्रयथे और अब कलि युगमें अन्नादिक में स्थितहैं अर्थात् अन्नादिक की प्राप्ति न होनेसे प्राण नष्ट होजातेहैं प्रत्येक युगमें जो२ धर्महैं और उन युगोंमें युगानुरूप जो२ ब्राह्मणहैं ॥३३॥ उनकी निंदा नहीं करनी चाहिये क्योंकि आचरण करनेवा ले वे ब्राह्मण युगानुसार हैं । जिस२ युगमें जैसी२ सामर्थ्य रही वैसेही

॥३४॥पराशरेणचाप्युक्तं प्रायश्चित्तंविधीयते। अहमद्यैवतत्स
र्वमनुस्मृत्य ब्रवीमि वः ॥३५॥ चातुर्वर्ण्यसमाचारं शृण्वंतुऋ
षिपुंगवाः। पराशरमतंपुण्यं पवित्रंपापनाशनम् ॥ ३६ ॥ चिंति
तंब्राह्मणार्थाय धर्मसंस्थापनायच । चतुर्णामपिवर्णानामाचा
रोधर्मपालकः॥३७॥ आचारभ्रष्टदेहानां भवेद्धर्मःपराङ्मुखः
। षट्कर्माभिरतोनित्यं देवतातिथिपूजकः। हुतशेषंतुभुंजानो
ब्राह्मणोनावसीदति ॥ ३८॥ संध्यास्नानंजपोहोमो देवतानां
च पूजनम्। आतिथ्यंवैश्वदेवं च षट्कर्माणिदिनेदिने ॥३९ ॥
इष्टो वा यदि वा द्वेष्योमूर्खः पंडितएव वा। संप्राप्तोवैश्वदेवांते
सोऽतिथिःस्वर्गसंक्रमः ॥४०॥ दूराच्चोपगतंश्रांतं वैश्वदेवउप

प्रायश्चित्तादि धर्म मनु गौतमादि मुनीश्वरोंने वर्णन किये ॥ ३४ ॥ अब मैं पराशरजी के कहे हुए संपूर्ण प्रायश्चित्तादि धर्मोंको स्मरण करके तुमसे कहताहूं ॥ ३५ ॥ हे मुनीश्वरों परम पवित्र पापोंका नाश करने वाला पराशर जीका संमत चारों वर्णोंका आचारजो ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणोंके निमित्त तथा धर्म स्थापन करने के लिये चिंतन किया गयाहै। तिसको श्रवण करो आचार चारों वर्णोंके धर्मोंका पालन करने वालाहै क्योंकि आचरण विना किये केवल धर्मके कथनमात्र हीसे धर्मका पालन नहीं हो सक्ता ॥ ३७ ॥ जिनका देह आचारसे भ्रष्टहै अर्थात् जिन्होंने धर्माचरण का त्याग करदियाहै उनसे धर्म परांमुख होजाताहै। जो ब्राह्मण नित्य षट् कर्ममें निरत देवता और अतिथियोंका पूजन करने वाला और होम क शेषका भोजन करने वाला है वह दुःखको प्राप्त नहीं होता ॥ ३८ ॥ स्नान पूर्वक संध्योपासन तथा गायत्र्यादि मंत्रोंका जप, हवन, देव पूजन, अतिथि सेवा और बलि वैश्व देव, येषट् कर्म नित्य करने चाहिये॥ ३९॥ मित्र हो वा शत्रु मूर्ख हो वा पंडित अतिथिके लक्षणों से संपन्न जो पुरुष बलि वैश्वदेव के अंत में आवै उसकी सेवा करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है ॥ ४० ॥ दूर से आया हुआ और थका हुआ जो पुरुषबलि वैश्वदेव के अंत में आकर उपस्थित हो उसको अतिथि जानना चाहिये जो कभी

स्थितम्। अतिथिंतंविजानीया न्नतिथिंपूर्वमागतः ॥ ४१ ॥
नैकग्रामीणमतिथिंसंगृह्णीतकदाचन। अनित्यमागतोयस्मा
त्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ ४२॥ अतिथिंतत्रसंप्राप्तं पूजयेत्स्वाग
तादिना। तथासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेन च ॥४३॥ श्रद्ध
याचान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेण च। गच्छतश्चानुयानेन प्रीति
मुत्पादयेद्गृही ॥४४॥ अतिथिर्यस्यभग्नाशो गृहात्प्रतिनिव
र्तते। पितरस्तस्यनाश्नंति दशवर्षाणि पञ्च च ॥ ४५॥ काष्ठ
भारसहस्रेण घृतकुंभशतेन च। अतिथिर्यस्यभग्नाश स्तस्यहो
मोनिरर्थकः ॥४६॥ सुक्षेत्रेवापयेद्बीजं सुपात्रेनिक्षिपेद्धनम्।
सुक्षेत्रे च सुपात्रेचह्युप्तं दत्तंननश्यति॥४७॥नपृच्छेद्गोत्राचर
णंनस्वाध्यायंश्रुतंतथा॥हृदयेकल्पयेद्देवं सर्वदेवमयोहिसः४८

पहिलेभी आया हो वह अतिथि नहीं है ॥ ४१ ॥ एक ग्राम के रहने वाले को आतिथ्य के लिये कभी ग्रहण न करै क्योंकि पहिले कभी उसका दर्शन नहीं हुआ है इसकारण से उसे अतिथि कहते हैं ॥ ४२ ॥ अपने स्थान पर प्राप्त हुए अतिथिको कुशल प्रश्नादि पूर्वक आसन देकर और चरण प्रक्षालन करके पूजन करै ॥ ४३ ॥ गृहस्थी को उचित है कि श्रद्धा पूर्वक अन्नदान देकर और प्रेम पूर्वक कुशल प्रश्नकर के जाते हुए अतिथि को कुछ दूरतक पहुंचाकर प्रीति उत्पन्न करै ॥ ४४ ॥ जिसके घरसे अतिथि निराश होकर फिर जाताहै उसके पितर पंद्रह वर्षतक उसके दियेहुए श्राद्ध संबंधी अन्नादिकों को ग्रहण नहीं करते ॥ ४५ ॥ जिसके स्थानसे अतिथि निराश गयाहो उसका सहस्र भारकाष्ठ और सौ कलश घृतसे होम करना निरर्थकहै ॥ ४६ ॥ बीज को अच्छे खेत में बोवै और धनकादान सुपात्र कोदे अच्छेक्षेत्रमें बोया हुआअन्न और सुपात्रको दिया हुआदान नष्ट नहीं होता ॥ ४७ ॥ अतिथि से गोत्र आचरण तथा आपने किन २ शास्त्रों का अध्ययन वा श्रवण किया है इत्यादिक प्रश्न न करै क्योंकि अतिथि देवस्वरूप होता है इसकारण उसे देववत् जानकर उस का सन्मान करै॥४८॥

अपूर्वः सुव्रती विप्रो ह्यपूर्वश्चातिथिस्तथा। वेदाभ्यास रतो नित्यं त्रयो ऽपूर्वे दिनेदिने ॥ ४९ ॥ वैश्वदेवेतुसंप्राप्ते भिक्षु केगृहमागते। उद्धृत्यवैश्वदेवार्थं भिक्षांदत्वाविसर्जयेत् ॥५०॥ यतिश्चब्रह्मचारी च पक्वान्नस्वामिनावुभौ।तयोरन्नमदत्वाच भुक्त्वाचांद्रायणंचरेत्॥५१॥दद्याच्चभिक्षात्रितयं परिव्राट्ब्रह्म चारिणाम् । इच्छया च ततोदद्याद्विभवेसत्यवारितः ॥५२॥ याति हस्तेजलं दद्याद्भैक्ष्यं दद्यात्पुनर्जलम् । तद्भैक्ष्यं मेरुणा तुल्यं तज्जलं सागरोपमम् ॥ ५३ ॥ यस्यचछत्रं हयश्चैव कुंज रोहसमृद्धिमत्।ऐंद्रस्थानमुपासीत तस्मात्तंनविचारयेत्॥५४॥ वैश्वदेवकृतंपापंशक्तोभिक्षु र्व्यपोहितुम्।नहिभिक्षुकृतं दोषं वै

सुव्रती अर्थात् यम नियमादि युक्त तथा कृच्छ्र चांद्रायणादि व्रतोंकाकरने वाला ब्राह्मण, और अतिथि, तथा वेदाभ्यासी, ये तीनों दिन२ अपूर्व ही हैं अर्थात् ये तीनों नित्यसन्मानके योग्यहैं ॥ ४९ ॥ यदि वलिवैश्वदेवके आरंभ करने के समय कोई भिक्षुक अर्थात् संन्यासी वा ब्रह्मचारी तथा अतिथि अपने स्थान पर आवे तौ वलिवैश्वदेवके निमित्त अन्नको अलग करके शेष अन्नमें से भिक्षा देकर भिक्षुकको विसर्जन करै ॥ ५० ॥ याति और ब्रह्मचारी ये दोनों पक्वान्नकी भिक्षाके अधिकारीहैं उनको अन्न दिये विना भोजन करके चांद्रायण व्रत करनेसे शुद्ध होताहै ॥ ५१ ॥ संन्यासी और ब्रह्मचारियों को तीन भिक्षा अवश्य देनी चाहियें यदि अधिक ऐश्वर्य मान् हो तो निरंतर इच्छा पूर्वक भिक्षा दे ॥ ५२ ॥ याति के हाथ में प्रथम जल दे तदनंतर भिक्षा दे फिर जल दे ऐसा क्रम है वह भिक्षा का अन्न सुमेरुपर्वत के तुल्य है और वह जल समुद्र के तुल्य है ॥ ५३ ॥ जिस संन्यासी के पास छत्र और हाथी घोडा आदि वाहन हों और वह समृद्धिमान् इंद्र के स्थान का अनुभव करता हो तो उसको संन्यासी न विचारै अर्थात् ऐसा संन्यासी सन्मान करने योग्य नहीं है॥ ५४ ॥ वलि वैश्यदेव संवंधी पाप को भिक्षुक दूर कर सक्ता है भिक्षुक के सन्मान करने से वलिवैश्व देवकी विधि में कुछ त्रुटिरह जावेतो वह पाप भिक्षुक (अतिथ्यादि जिनका वर्णन पूर्व होचुका) के सन्मान करने से शांत होजाता है परंतु वलि वैश्वदेव के कारण भिक्षुक का सन्मान सम्यक् प्रकार से न हो तो उसके दोष को वलि वैश्वदेव नष्ट नहीं कर

श्वदेवोऽव्यपोहति ॥ ५५ ॥ अकृत्वा वैश्वदेवंतु येभुंजंतेद्विजातयः।तेषामन्नं नभुंजीतकाकयोनिंब्रजंतिते॥५६॥अकृत्वावैश्वदेवंतुभुंजंतेये द्विजाधमाः। सर्वेते निष्फलाज्ञेयापतंतिनरकेऽशुचौ ॥ ५७ ॥वैश्वदेवविहीनाये आतिथ्येनवाहिष्कृताः। सर्वेतेनरकंयांति काकयोनिंव्रजंतिच ॥ ५८ ॥ शिरोवेष्ट्यतुयोभुंक्ते दक्षिणाभिमुखस्तुयः ॥ वामपादकरःस्थित्वा तद्वैरक्षांसिभुंजते ॥ ५९ ॥ यतये कांचनंदत्वा तांबूलंब्रह्मचारिणे। चौरेभ्योप्यभयंदत्वा दातापि नरकं ब्रजेत्॥ ६० ॥ शुक्लवस्त्रं च यानंच तांबूलं धातुमेव च। प्रतिगृह्यकुलंहन्यात्प्रतिगृण्हातियस्य च ॥ ६१ ॥ चौरोवायदिचांडालःशत्रुर्वापितृघातकः। वैश्वदेवेतुसंप्राप्तेसोऽतिथिः स्वर्गसंक्रमः ॥ ६२ ॥ नगृण्हातितुयो विप्रः अतिथिंवेदपारगम्। अदत्तंचान्नमात्रंतुभुक्त्वाभुंक्तेतु

सक्ता ॥ ५५ ॥ जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य बलि वैश्यदेव बिना किये भोजन करते हैं वे काक योनि को प्राप्त होते हैं अत एव उनके अन्न का भोजन करना योग्य नही है ॥ ५६ ॥ जो द्विजाधम बलि वैश्व देव किये विना भोजन करते हैं उनके सब कर्म निष्फल होजाते हैं और वे अशुचि नाम नरकमें पड़तेहैं ॥ ५७ जो बलिवैश्वदेव क्रिया करके हीन हैं और अतिथि सेवाभी नहीं करते वे संपूर्ण पुरुष नरक को प्राप्त होतेहैं और नरक भोगनेके पश्चात् काक योनिको प्राप्त होतेहैं ॥ ५८ ॥ जो मनुष्य शिरको वस्त्रादिसे वेष्टित करके तथा वाम चरण पर हाथ धरकर दक्षिण दिशाको मुख करके भोजन करतेहैं उसको राक्षसी भोजनकहतेहैं अर्थात् वह भोजन तामसी होजाता है ॥५९॥संन्यासीको सुवर्ण आदिक धनका दान करनेसे तथा ब्रह्म चारीको तांबूल देनेसे और चोरोंको अभय दान देनेसे दाताभी नरक को प्राप्त होता है ॥ ६० ॥ संन्यासी आदिक श्वेतवस्त्र, वाहन, और तांबूल तथा धनादिक का प्रतिग्रह लेकर अपने और जिस से प्रतिग्रह लेते हैं उस के भी कुलका नाश करते हैं ॥ ६१ ॥ चोर हो वा चांडाल शत्रु होवा पितृ घाती जो बलिवैश्व देवकेसमयप्राप्त हो वह अतिथिस्वर्गप्राप्ति कराने वाला है॥६२॥

किल्विषम् ॥६३॥ ब्राह्मणस्यमुखंक्षेत्रंनिरूपममकंटकम् । बा-
पयेत्सर्ववीजानिसाकृषिः सर्वकामिका ॥ ६४ ॥ सुक्षेत्रेवापये
द्वीजंसुपात्रेनिक्षिपेद्धनम् । सुक्षेत्रेचसुपात्रेचह्युतंतन्नाविनश्य
ति ॥ ६५ ॥अव्रताह्यनधीयानायत्रभैक्षचराद्विजाः॥ तंग्रामं
दंडयेद्राजा चौरभक्त प्रदोहिसः ॥ ६६ ॥ क्षत्रियोहिप्रजा
रक्षन्शस्त्रपाणिः प्रदंडवान् निर्जित्यपरसेन्यानिक्षितिंधर्मे
ण पलयेत् ॥ ६७॥ नश्रीः कुलक्रमायाता भूषणोल्लिखितापि
वा। खड्गेनाक्रम्यभुंजीतवीरभोग्यांवसुंधराम् ॥ ६८॥ पुष्पं

जो ब्राह्मण वेद पारंगत अतिथिको ग्रहण नहीं करते और उसे विना अन्न जल दिये भोजन करतेहैं वे पापका भोजन करतेहैं अर्थात् वे पुरुष पापी हैं ॥६३॥ब्राह्मण का मुख अनुपम कंटकादिसे रहित उत्तमक्षेत्रहै उसमें संपूर्ण वीजों को वोवै वह, ब्राह्मणके मुखरूपी कृषि संपूर्ण कामना रूप फलोंकी उत्पन्न करने वाली है ॥ ६४ ॥ पुरुषको उचितहै कि श्रेष्ठ क्षेत्रमें वीज बोवै और सुपात्रको धनका दानदे अच्छे खेतमें और सुपात्र में बोयाहुआबीज नष्टनहीं होता ॥ ६५ ॥ जिस ग्राममें व्रत और वेदाध्ययन रहित ब्राह्मण भिक्षा वृत्ति करतेहैं उस ग्रामको राजा दंड दे नहींतो वहराजा चोरोंको भागदेने वाला होगा क्योंकि-जिस प्रकार धर्मानुसार प्रजा राजाको षष्ठांश भाग देतीहैं उसी प्रकार तपस्वी ब्राह्मणोंको क्षत्रियादिकोंसे भाग मिलना चा-हिये यदि क्षत्रियादिक ब्राह्मणोंकी अजीविका सेवादिक न करैंगे तो ब्रा-ह्मण अवश्यही भिक्षा वृत्ति करेंगे अतएव वे ग्राम वासी क्षत्रिय वैश्यादिक राजा करके दंड देनेके योग्य हैं ॥६६॥ क्षत्रिय हाथ में शस्त्र ग्रहण किये हु-ए दुष्टोंको उग्र दंड देकर प्रजाकी रक्षा करता हुआ शत्रु सेनाको जी-त कर पृथ्वी का धर्म से पालन करै ॥ ६७ ॥ अपने कुलके क्रमानुसार प्रा-प्त हुई जो लक्ष्मीहै वह लक्ष्मी बीरता नहोनेके कारण स्थिर नहीं है और न भूषण धारण करनेसे क्षत्रियकी शोभा होती है किन्तु पृथ्वी शूरबीर राजाओं करके भोगने योग्यहै अतएव खड्ग करके जीती हुई भूमिको भोगै ॥ ६८ ॥ जैसे माली उपवनमेंसे पुष्प फलादिकोंको ग्रहण करता है

पुष्पं विचिनुयान्मूलच्छेदं न कारयेत् । मालाकारइवारामे न यथांगारकारकः ॥ ६९ ॥ लाभकर्मतथारत्नं गवां च परि पालनम् । कृषिकर्मचवाणिज्यं वैश्यवृत्तिरुदाहृता ॥ ७० ॥ शूद्रस्यद्विजशुश्रूषा परमोधर्मउच्यते । अन्यथाकुरुतेकिंचि त्तद्भवेत्तस्यनिष्फलम् ॥ ७१ ॥ लवणं मधुतैलंचदधित क्रंघृतंपयः । नदुष्येच्छूद्रजातीनां कुर्यात्सर्वेषुविक्रयम् ॥७२॥ बिक्रियन्मद्यमांसानिह्यभक्षस्य च भक्षणम् । कुर्वन्नगम्या गमनंशूद्रःपतातितत्क्षणात् ॥ ७३ ॥ कपिलाक्षीरपानेन ब्राह्मणीगमनेन च। वेदाक्षरविचारेण शूद्रस्यनरकं ध्रुवम् ॥७४॥

इतिश्रीपाराशरीयेधर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥



किन्तु अग्नि लगाने वालेकी नाईं वृक्षोंका मूल छेदन नहीं करता उसी प्रकार राजाको उचितहै कि प्रजासे थोड़ा२ अपना भागलेकर प्रजाकी रक्षा करै सर्वापहारी नहो ॥ ६९ ॥ ब्याज लेना, रत्नोंका क्रय विक्रय करना, गोपालन अर्थात् गौओंकी रक्षा करना और उनसे जो वृषभादिक उत्पन्न हों उनको बेचकर आजीविका करना, खेती और व्यापार करना यहवैश्य की वृत्तिहै ॥ ७० ॥ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन तीनों वर्णोंकी सेवा करके निर्वाह करना शूद्रका परम धर्महै, अन्य क्रियाओं के करनेका शूद्रको अधिकार नहींहै॥ ७१ ॥ लवण मधु (शहत) तैल तथा दही मठा और घृत दुग्धादि संपूर्ण रसोंके वेचनेसे शूद्र जातिको दूषण नहीं लगता ॥ ७२ ॥ मद्य वा मांसकोवेचनेसे और अभक्ष्य वस्तु केभक्षण करने से तथा अगम्या स्त्री में गमन करने से शूद्र तत्काल पतित होजाता है ॥ ७३ ॥ कपिला अर्थात् सुवर्ण केसे रंग वाली गौ का दुग्धपान करने से और ब्राह्मणी में गमन करने से तथा वेदाक्षरका विचार करने से शूद्र को निश्चय नरक की प्राप्ति होती है॥७४॥

इतिश्री पराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥



अतः परं गृहस्थस्य कर्माचारं कलौ युगे । धर्मसाधारणं शक्त्याचातुर्वर्ण्याश्रमागतम् ॥ १ ॥ तं प्रवक्ष्याम्यहं पूर्वं पराशर वचोयथा। षट्कर्मसहितोविप्रः कृषिकर्म च कारयेत्॥२॥ क्षुधितंतृषितंश्रांतंवलीवर्दं नयोजयेत् । हीनांगं व्याधितं क्लीवं वृषं विप्रो न वाहयेत् ॥ ३ ॥ स्थिरांगंनीरुजंतृप्तंसुनर्दंषं ढ वर्जितम् । वाहयेद्दिवसस्यार्द्धं पश्चात्स्नानं समाचरेत् ॥ ॥ ४ ॥ जपं देवार्चनं होमं स्वाध्यायं चैवमभ्यसेत् । एकद्वि त्रिचतुर्विप्रान्भोजयेत्स्नातकान् द्विजः॥ ५॥ स्वयंकृष्टेतथा क्षेत्रेधान्यैश्चस्वयमर्जितैः । निर्वपेत्पंचयज्ञांश्चक्रतुदीक्षांचका रयेत् ॥ ६ ॥ तिलारसानविक्रेयालोहलाक्षादयस्तथा ॥ वि प्रैश्चफलपुष्पानिनीलरक्तांशुकानिच ॥ ७ ॥ ब्राह्मणश्चेत्कृषिं कुर्यात्तन्महादोषमाप्नुयात् । हलमष्टगवंधर्म्यंषड्गवंमध्यमं

इसके अनंतर कलियुग में गृहस्थके कर्म आचार और यथा शक्ति चारों वर्ण तथा चारों आश्रमोंका मिश्रित धर्म ॥ १ ॥ जैसाकि--पराशरजीने कहा है वर्णन करते हैं । जो ब्राह्मण षट कर्म करके युक्त हो और कृषि करता हो ॥ २ ॥ वह भूखे प्यासे और थके हुए बैलको हलमें न जोडै॥ अंगहीन, रोगी, तथा नपुंसक बैल को न जोतै ॥ ३ ॥ जो दृढ अंगवाला रोग रहित तृप्त (छकाहुआ) पुष्ट और नपुंसकता रहित हो उस वृषभको मध्यान्ह पर्यंत जोत कर कार्य ले अधिक कार्य न ले उसके उपरांत स्नानादिक कर्म करै ॥ ४ ॥ जप देवपूजन और होमतथा वेदाध्ययनका अभ्यास करतार है एक दो तथा तीन वा चार स्नातक (पूर्ण ब्रह्मचर्य करके गृहस्थाश्रम को प्राप्त होने वाले) ब्राह्मणों को भोजन करावे ॥ ५ ॥ जो धान्य अपने जोते हुए खेत में उत्पन्न हुए हों अथवा अपने परिश्रम से संचय किये हों उन धान्यों से पंचयज्ञों को करता रहै और विशेष यज्ञादिकों को भी करै ॥ ६ ॥ ब्राह्मणों को उचित है कि तिल और संपूर्ण प्रकार के रस तथा लोह लाक्षा-दिक फल पुष्प तथा नील वा रक्तवर्ण के वस्त्रों का विक्रयन करै ॥ ७ ॥ ब्राह्मण को खेती करने में वडा पाप होता है परंतु जिस हल में आठ

स्मृतम् ॥ ८ ॥ चतुर्गवं नृशंसानांद्विगवंवृषघातिनाम् । द्विग
वंवाहयेत्पादं मध्याह्नेतुचतुर्गवम् ॥ ९ ॥ षंड्गवंतुत्रियामाहे
ऽष्टभिः पूर्णंतुवाहयेत् । नयातिनरकेष्वेवं वर्तमानस्तुवैद्विजः
॥ १० ॥ दानंदद्याच्चवैतेषां प्रशस्तंस्वर्गसाधनम्। संवत्सरेण
यत्पापंमत्स्यघातीसमाप्नुयात्॥११॥ अयोमुखेनकाष्टेनतदेका
हेनलांगली।पाशकोमत्स्यघातीच व्याधःशाकुनिकस्तथा॥१२॥
प्रदाता कर्षकश्चैव पंचैतेसमभागिनः । कंडनी पेषणी चुल्ली
उदकुंभी च मार्जनी ॥ १३ ॥ पंचसूना गृहस्थस्य अहन्य
हनिवर्तते वैश्वदेवोवालिर्भिक्षा गोग्रासोहंतकारकः ॥ १४ ॥

वृषभ हों वह हल धर्मपूर्वक उत्तम है और छह वृषभ वाला मध्यम है ॥ ८ ॥ हल में चार वृषभ जोतने वाले दयाहीन समझे जाते हैं और दो वृषभ जोतने वाले गोहिंसक हैं ॥ दो वृषभ वाले हल से पहर भर दिन चढ़ेपर्यंत जोतै और चारवृषभ वाले से मध्यान्ह तक जोतै ॥ ९ ॥ छह वृषभों को हल में जोत कर तीसरे पहर पर्यंत कार्य ले और आठवृषभ वाले हल से सायंकाल तक जोतै ॥ इस प्रकार वृत्ति करने वाला ब्राह्मण नरक में नहीं जाता ॥ १० ॥ ऐसे ब्राह्मणों को दान दे वह दान प्रसंशनीय और स्वर्ग का देने वाला है । जो पाप वर्षभर में मत्स्यघात करने से होता है ॥ ११ ॥ वही पाप जिस हल के काष्ट के अग्र में लोहा लगा हो उस हल से जोतने वाले को एकही दिन में होता है । विना अपराध फांसी देने वाला, मत्स्यघाती मृगादिकों की हिंसा करने वाला तथा पक्षियों का घात करने वाला ॥ १२ ॥ और जो कृषी करने वाला ब्राह्मण दान न देता हो ये पांचों पाप करने में समान हैं ओखली, चक्की, चूल्हा तथा जल भरे हुए पात्रों के रखने का स्थान और बुहारी ॥ १३ ॥ इनपांचों वस्तुओं के द्वारा नित्यप्रति हिंसा होती है यदि गृहस्थी नित्यप्रति बलिवैश्व देव और देव पूजन करता रहै और अतिथ्यादिकों को भिक्षा देता रहै और भोजन करने से पहिले जो भोजन रसोई में बने हों उन सब में से थोड़ा २ भोजन गौत्रों को भी सत्कार,पूर्वक दिया करै तथा देव पितरों के निमित्त भी सोलह ग्रास की हंत कारनिकाल कर सुपात्र ब्राह्मण तथा गौ आदिक को दिया करै ॥ १४ ॥

गृहस्थः प्रत्यहंकुर्यात्सूनादोषैर्नलिप्यते । वृक्षंछित्वामहीं भित्वाहत्वा च कृमिकीटकान् ॥ १५ ॥ कर्षकः खलुयज्ञेन सर्व पापैः प्रमुच्यते । यो नदद्याद्द्विजातिभ्योराशिमूलमुपागतः ॥ १६ ॥ सचौरः सचपापिष्ठो ब्रह्मघ्नंतंविनिर्दिशेत् । राज्ञे दत्वातुषड्भागंदेवानांचैकविंशकम् ॥ १७ ॥ विप्राणां त्रिंशकं भागं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ क्षत्रियोपिकृषिंकृत्वा देवान्विप्रांश्चपूजयेत् ॥ १८ ॥ वैश्यः शूद्रस्तथा कुर्यात्कृषिवाणिज्यशिल्पकम् । विकर्मकुर्वतेशूद्रा द्विज शुश्रूषयोज्झिताः ॥ ॥ १९ ॥ भवंत्यल्पायुषस्तेवैनिरयं यांत्यशंसयम् । चतुर्णामपिवर्णनामेषधर्मःसनातनः ॥ २० ॥

इतिपाराशरीये धर्मशास्त्रेद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तो वह गृहस्थी ऊपर कहे हुए हिंसाओं के दोष से लिप्त नहीं होगा। कृषि करने में वृक्षों का छेदन और पृथ्वी का भेदन (विदीर्णता) होता है और हल के द्वारा कृमि इत्यादिक असंख्यजीव जंतु मरते हैं ॥ १५ ॥ इन पापों से छूटने के निमित्त खेती करने वाले को यज्ञादिक अवश्य करने चाहियें। जो कृषी करने वाला अन्न की राशि का प्रथम भाग सुपात्र ब्राह्मणो को नहीं देता ॥ १६ ॥ उसे चोर और महापापी तथा ब्रह्म हिंसा करने वाले के समान जानना चाहिये । कृषि करने वाला छठाभाग राजा को दे और इक्कीसवां भाग देवतों के अर्पण करै ॥ १७ ॥ और तीसवां भाग ब्राह्मणों को दे तो वह संपूर्ण पापों से छूटता है ॥ यदि क्षत्रिय खेती करै तो वह भी इसी प्रकार देवता और ब्राह्मणादिकों का भाग दे ॥ १८ ॥ वैश्य और शूद्रभी कृषि वाणिज्य और शिल्पकर्म करै जो शूद्र ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों की सेवा का त्याग करके निषिद्ध कर्म करते हैं ॥ १९ ॥ उनकी आयु स्वल्प होती है और वे नरक को प्राप्त होते हैं इस में संदेह नहीं। चारौं वर्णों का यही सनातन धर्म है ॥ २० ॥

इतिश्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अतःशुद्धिंप्रवक्ष्यामिजननेमरणेतथा। दिनत्रयेणशुद्ध्यंतिब्राह्मणाःप्रेतसूतके ॥ १ ॥ क्षत्रियोद्वादशाहेनवैश्यःपंचदशाहकैः। शूद्रःशुद्ध्यतिमासेनपराशरबचोयथा ॥ २ ॥ उपवासेनविप्राणामंगशुद्धिश्चजायते । ब्राह्मणानांप्रसूतौतुदेहस्पर्शो विधीयते ॥ ३ ॥ जातौविप्रो दशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पंचदशाहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥ ४ ॥ एकाहाच्छुद्ध्यतेविप्रोयोग्निवेदसमन्वितः । त्र्यहात्केवलवेदस्तुहीनोहिदशभिर्दिनैः ॥ ५ ॥ जन्मकर्मपरि भ्रष्टः संध्योपासनवर्जितः। नाम धारकविप्रस्तुदशाहंसूतकीभवेत् ॥ ६ ॥ अजागावोमहिष्यश्चब्राह्मणीनवसूतिका । दशरात्रेणसंशुद्ध्येद्भूमिस्थंचनवोदकम् ॥ ७ ॥ एकपिंडास्तुदायादाःपृथ

इस के अनन्तर जन्म और मरण में जो सूतक और आशौच होता है उस की शुद्धि को कहते हैं। मृतक के आशौच में ब्राह्मण तीन दिन में शुद्ध होते हैं ॥ १ ॥ और क्षत्रिय बारह दिन में शुद्ध होते हैं। वैश्य पंद्रह दिन पर्यंत अपवित्र रहता है और शूद्र की शुद्धि एक मास में होती है ऐसा पराशर जी का बचन है ॥ २ ॥ ब्राह्मणों के अंग की शुद्धि उपवासादिकों करके होजाती है। और जिन ब्राह्मणों के स्थान में जन्म का पुत्रादिक के सूतक हुआ हो उन ब्राह्मणों के देह स्पर्श करने का दोष नहीं है ॥ ३ ॥ जन्म सूतक में ब्राह्मण दस दिन में और क्षत्रिय बारह दिन में तथा वैश्य पंद्रह दिन में और शूद्र एक मास में शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ जो ब्राह्मण वेद पाठी हैं और नित्य अग्नि होत्र करते हैं वे एक दिन में ही शुद्ध होजाते हैं और जो केवल वेदही कर के युक्त हैं वे तीन दिन में शुद्ध होते हैं और जो वेद तथा अग्नि होत्र दोनों कर के हीन हैं वे दश दिन तक अशुद्ध रहते हैं ॥५॥ जो ब्राह्मण अपने जन्म समय से ही नित्य नै मित्तिकादिक कर्मों से हीन हैं और संध्योपासन भी नहीं करते ऐसे नाम धारक ब्राह्मण (जो केवल नाम मात्रही से ब्राह्मण कहलाते हैं) दश दिन पर्यन्त अशुचि रहते हैं ॥ ६ ॥ वकरी, गाय, भैंसें तथा प्रसूता ब्राह्मणी और भूमिपर स्थित वर्षा का नवीन जल ये सब दश दिन में शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥ सपिंडदायाद अर्थात्

ग्दारनिकेतनाः। जन्मन्यपिविपत्तौचतेषांतत्सूतकंभवेत्॥८॥ तावत्तत्सूत्रकंगोत्रेचतुर्थ पुरुषेणतु। दायाद्विच्छेदमाप्नोतिपं चमोवात्मवंशजः॥ ९॥ चतुर्थेदशरात्रंस्यात्षण् निशापुंति पंचमे। षष्ठे चतुरहाच्छुद्धिः सप्तमेतु दिनत्रयात्॥ १०॥ भृग्वग्निमरणे चैव देशांतर मृते तथा। वालेप्रेते चसंन्यस्ते सद्यः शौचंविधीयते॥ ११॥ देशांतरमृतः कश्चित्सगोत्रः श्रूयतेयादि। नत्रिरात्रमहोरात्रंसद्य.स्नात्वाशुचिर्भवेत्॥१२॥ देशांतरगतोविप्रःप्रयासात्कालकारितात्। देहनाशमनुप्राप्तस्तिथिर्नज्ञायतेयादि॥ १३॥ कृष्णाष्टमीत्वमावास्याकृष्णा चैकादशीचया। उदकंपिंडदानंचतत्रश्राद्धंचकारयेत्॥ १४॥

धनादिक का भागलेने वाले जो पुत्र पौत्रादिक होते हैं उन के स्थान पृथक २ हों तौ भी जन्म और मरण में उनको आशौच होता है॥ ८॥ गोत्र में भी दशही दिन तक का सूतक रहता है चौथी पीढ़ी तक की संतान अर्थात् एक प्रपितामह तककी संतान एक गोत्र में कहलाती है पांचवींपीढ़ी वाला पुरुष धनादिक के भाग का अधिकारी नहीं है इसलिये उसे दश दिन तक का सूतक नहीं होता क्योंकि चौथीपीढ़ी के उपरांत बंशसंज्ञा होती है॥ ९॥ चौथीपीढ़ी वाला पुरुष दश दिन में पांचवीं पीढ़ी वाला छह दिन में छठी पीढ़ी वाला पुरुष चारदिन में और सातवीं पीढ़ी वाला तीन दिन में शुद्ध होता है॥ १०॥ जो पुरुष पर्वत से गिरकर तथा अग्नि में जलकर मृत्यु को प्राप्त हुआ हो अथवा जिस की मृत्यु परदेश में हुई हो उसके सूतक में और बालक वा संन्यासी की मृत्यु होने में शीघ्र शुद्धि होती है॥ ११॥ यादि कोई सगोत्री देशांतर में मृत्यु को प्राप्त हुआ हो तो तीन दिन का आशौच नहीं होता किंतु जब उसकी मृत्यु का वृत्तांत श्रवण करै तब शीघ्र स्नान करने से एक दिन रात में ही शुद्ध होजाता है॥ १२॥ जोब्राह्मण परदेश में जाकरकालवश से मृत्युको प्राप्त हुआ हो यादि उसके मृत्यु की तिथि ज्ञात नहो॥ १३॥ तो कृष्णपक्षकी अष्टमी वाअमावास्या तथा कृष्णपक्ष की एकादशीको उसके निमित्त जलदान और पिंड दानतथा श्राद्ध करै॥ १४॥ जिन बालकों के दांत नहीं जमेहों और जो गर्भ

अजातदंता ये वाला ये चगर्भाद्विनिःसृताः । नतेषामग्निसं-
स्कारोनाशौचं नोदकक्रिया ॥ १५ ॥ यदिगर्भोविपद्येत स्त्र
वतेवापि योषितः । यावन्मासस्थितो गर्भो दिनंतावत्तु सूत
कम् ॥ १६ ॥ आचतुर्थाद्भवेत्स्रावः पातः पंचमषष्ठयोः ।
अतऊर्द्ध्वंप्रसूतिः स्याद्दशाहं सूतकं भवेत् ॥ १७॥ दन्तजाता
ह्यजाताश्च कृतचूडाश्च संस्थिताः । अग्निसंस्करणं तेषां
त्रिरात्रमशुचिर्भवेत्॥१८॥आदंताज्जन्मतःसद्य आचूडान्नैशि
की स्मृता । त्रिरात्रमुपनीतस्यदशरात्रमतः परम् ॥ १९ ॥
ब्रह्मचारी गृहे येषां हूयते च हुताशनः । संपर्कं चेन्नकुर्वंति
न तेषां सूतकं भवेत् ॥ २० ॥ संपर्कादुष्यते विप्रो जनने
मरणे तथा । संपर्काच्च निवृत्तस्य न प्रेतं नैवसूतकम् ॥२१॥

से उत्पन्न होतेही मृत्युकोप्राप्त हुएहों उनका अग्निसंस्कार और आशौच तथा जलदान नहीं होता ॥ १५ ॥ यदिगर्भ स्राव तथा गर्भपात हो तो जितने मासका गर्भ हो उतनेही दिनोंका सूतक होताहै ॥ १६ ॥ यदि चारमासमें गर्भगिरै तौ उसे गर्भस्रावकहतेहैं और पांचवें वा छठे मासमें गर्भ गिरनेको 'गर्भपात' कहते हैं । तदनंतर छठे माससे दशवें मास पर्यंत प्रसव कहलाता है प्रसवमें दश दिनका सूतक मानना उचित है ॥ १७ ॥ जिन बालकोंका चूडा कर्म होगया हो उनके दांत जमे हों वा न जमे हों उन बालकोंकी मृत्यु होने में अग्नि संस्कार करना चाहिये और तीन दिनका आशौच मानना उचित है ॥ १८ ॥ दांत जमने से पूर्व मृत्यु हो तो शीघ्र स्नान मात्रसे शुद्धि होजातीहै और चूडाकर्म से पहिले मृत्युहो तो एक दिन रात में शुद्धि होती है । यज्ञोपवीत होनेसे पूर्व मृत्यु हो तो तीन दिन में शुद्धि होती है और यज्ञोपवीत होने के अनंतर दश दिनमें शुद्धि होती है ॥ १९ ॥ जिन के घरमें कोई पुरुप ब्रह्मचारी हो तथा जिनके घर नित्य प्रति अग्नि होत्र होता हो और प्रसूता स्त्री से स्पर्शादिक न करते हों तौ उनको सूतक नहीं होता ॥ २० ॥ जन्म और मरण में ब्राह्मण प्रसूता स्त्री और मृतकके स्पर्शादिक करने से दूषित होता है जो स्पर्शादिक नहीं करता उसे जन्म वा मरण में सूतक नहीं होता ॥ २१ ॥ शिल्पवृत्ति करने वाले

शिल्पिनःकारुका वैद्या दासी दासाश्च नापिताः। राजानः श्रोत्रियाश्चैव सद्यः शौचाः प्रकीर्तिताः॥ २२॥ सव्रतो सत्र पूतश्च आहिताग्निश्चयो द्विजः। राज्ञश्च सूतकं नास्ति स्नानपूताः प्रकीर्तिताः॥ २३॥ प्रसवे गृहमेधीतु न कुर्या त्संकरं यदि। दशाहाच्छुद्ध्यतेमातात्ववगाह्यपिताशुचिः॥२४॥ सर्वेषां शावमाशौचं मातृ पित्रोस्तु सूतकम्। सूतकं मातु रेवस्यादुपस्पृश्य पिताशुचिः॥ २५॥ यदि पत्न्यां प्रसूतायां संपर्ककुरुतेद्विजः। सूतकं तु भवेत्तस्य यदि विप्रश्चवेदवि त्॥ २६॥ संपर्काज्जायते दोषो नान्यो दोषोऽस्तिवै द्विजे। तस्मात्सर्व प्रयत्नेन संपर्कवर्जयेद्बुधः॥ २७॥ विवाहोत्सवयज्ञेषु त्वंतरामृतसूतके। पूर्व संकल्पितं

कारुक (हलवाई आदिक) तथा वैद्य, दासी तथा दास, नाई, राजा और वेद पाठी ये सम्पूर्ण शीघ्र शुद्ध होजाते हैं॥ २२॥ जो ब्राह्मण बृतोंकरके युक्त तथा यज्ञोंकरके पवित्र है और नित्य अग्निहोत्र करता है उस ब्राह्मण को तथा राजा को सूतक नहीं होता क्योंकि—यह सब स्नानहीकर के पवित्र होजाते हैं॥ २३॥ यदि गृहस्थी वर्ण संकर सन्तानको उत्पन्न न करै तो प्रसव में माता दश दिन में शुद्ध होती है और पिता स्नानमात्र से शुद्ध होजाता है॥ २४॥ मृतक का आशौच तौ कुटुम्बमात्र को होता है, और जन्मसूतकमाता पिता दोनों को होता है, तिस में भी सूतक विशेष कर के माताही को लगता है क्यों कि—पिता तौ केवल आचमन करने ही से शुद्ध होजाता है॥ २५॥ जो ब्राह्मण प्रसूता स्त्रीसे संसर्ग करता है उसे सूतक अवश्य होता है, चाहे वह ब्राह्मण वेदों का जानने वाला भी क्यों न हो॥२६॥ ब्राह्मण को संसर्गही से दोष होता है यदि वह संसर्ग न करै तो कुछ दोष नहीं होता, अतएव संपूर्ण यत्नों करके विद्वान् को संसर्ग का त्याग करना चाहिये॥ २७॥ यदि विवाह उत्सव, और यज्ञादिकके मध्य में किसी सपिंडादि के मृत्यु होने के कारण सूतक हो जाय तो पहिले से संकल्प किया हुआ द्रव्य जो किसी को देने के निमित्त रक्खा है दूषित नहीं

द्रव्यं दीयमानं न दुष्यति ॥ २८ ॥ अंतरा तु दशाहस्य पुनर्मरण जन्मनी । तावत्स्यादशुचिर्विप्रोयावत्पूर्वं न गच्छति ॥ २९ ॥ ब्राह्मणार्थं विपन्नानां गवार्थं प्राणदायिनाम् । आहवेषु विपन्नानामेकरात्रमशौचकम् ॥ ३० ॥ द्वाविमौपुरुषौ लोके सूर्यमंडल भेदिनौ । परि व्राड् योग युक्तश्च रणे चाभिमुखोहतः ॥ ३१ ॥ यत्र यत्र हतः शूरः शत्रुभिः परि वेष्टितः।अक्षयाँल्लभते लोकान् यदि क्लीवं न भाषते।३२। संन्यस्तं ब्राह्मणं दृष्ट्वा स्थानाच्चलति भास्करः । एषमेमंडलंभित्वापरंस्थानंप्रयास्यति ॥ ३३ ॥ यस्तु भग्नेषुसैन्येषु विद्रवत्सुसमंततः । परि त्रातायदागच्छेत्स च क्रतु फलं लभेत् ॥ ३४ ॥ यस्यक्षतावृतंगात्रं शरमुद्गर यष्टिभिः । देवकन्यास्तुतंवीरंहरंति रमयंतिच ॥ ३५ ॥ देवांगना सहस्त्राणिशूर

होता है ॥ २८ ॥ यदि दश दिन के मध्य में किसी दूसरे पुरुष का जन्म वा मृत्यु हो तो ब्राह्मण उसी समय तक अशुचि रहता है जिस समय तक पहिले पुरुष के जन्मवामृत्युसे अशुचि रहता॥२९॥जिनकी मृत्यु ब्राह्मण और गौ के निमित्त हुई हो अथवा जो संग्राम में मृत्यु को प्राप्त हुए हों उनका आशौच एक दिन रात का होता है ॥ ३० ॥ संसारमें ये दो पुरुष सूर्य मण्डलको भेदनकरके ब्रह्म लोकको जातेहैं एक तौ योगकरके युक्त संन्यासी और दूसरा जो रण में सन्मुख स्थित रहकर मृत्यु को प्राप्त हुआ ॥ ३१ ॥ शत्रुओं से घेरे जाने पर भी जो शूरवीर नपुंसकता के वचन नहीं बोलते वे चाहे जिस (शुद्ध वा अशुद्ध) स्थान में मारे गयेहों परन्तु निश्चय अक्षय लोकों को प्राप्त होते हैं ॥ ३२ ॥ संन्यासी ब्राह्मण को देखकर सूर्यभी अपने स्थानसे चलायमान होजाता है कि यह मेरे मंडलको भेदन करके परमपद को प्राप्त होगा ॥ ३३ ॥ जो रण में (शस्त्र प्रहारादिक से व्याकुल होकर) भागती हुई सेनाकी रक्षा करता है वह यज्ञके फलको प्राप्त होताहै ॥ ३४ ॥ रणमें जिसका शरीर शूल, मुद्गर (मूंगरी) और यष्टि (लाठी) आदिकों से क्षत(भग्न)हुआहो उसवीर को देवकन्या लेजातीहैं और रमण करतीहैं ॥ ३५ ॥ संग्राममें मृत्युको प्रा-

मायोधनेहतम् । त्वरमाणाःप्रधावंति ममभर्ता ममेतिच ॥ ॥३६॥ यंयज्ञसंघैस्तपसा च विप्राः स्वर्गैषिणोयत्रयथैवयांति । क्षणेनयांत्येवहितत्रवीराःप्राणान्सुयुद्धे नपरित्यजन्ति ॥३७॥ जितेनलभ्यतेलक्ष्मी मृतेनापि वरांगनाः । क्षणध्वंसिनिका येस्मिन्काचिंतामरणेरणे ॥ ३८ ॥ ललाटदेशेरुधिरंश्रवच्च यस्याहवेतु प्रविशेतवक्रम् । तत्सोमपानेन किलास्यतुल्यं संग्रामयज्ञे विधिवच्च दृष्टम् ॥ ३९ ॥ अनाथंब्राह्मणं प्रेतं ये वहंति द्विजातयः। पदे पदे यज्ञफलमानुपूर्व्याल्लभंतिते॥४०॥ नतेषा मशुभं किंचित्पापं वा शुभकर्मणां । जलावगाहनात्ते षांसद्यः शौचं विधीयते ॥ ४१ ॥ असगोत्रमबंधुंच प्रेतीभूतं

सहुए शूर वीर को देखकर सहस्रों देवांगना 'यह मेरा पतिहो, इस प्रकार कहती हुई शीघ्रता पूर्वक दौड़कर उसके पास आती हैं ॥ ३६ ॥ स्वर्गकी इच्छा करने वाले ब्राह्मण अनेकों यज्ञ और तपके द्वारा जिस प्रकार (वि-मानादिकों का सुख भोगते हुए) जिस स्थान (स्वर्ग) को प्राप्त होतेहैं उसी प्रकार (आनंद युक्त) उस (स्वर्ग) स्थानको रणमें प्राणत्याग कर ने वाले वीर क्षणमात्रमें प्राप्त होजाते हैं ॥ ३७ ॥ रणमें विजय प्राप्त होनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है और मृत्यु प्राप्त होनेसे देवांगना (अप्सरा) ओंकी प्राप्ति होतीहै फिर युद्धमें मृत्युको प्राप्त होनेसे इस क्षणभंगुर देहकी क्या चिंता है ॥ ३८ ॥ संग्राममें जिस वीरके मस्तकसे रुधिर बहकर मुखमें प्रवेश करै उसके निमित्त वह रुधिरका पान करना संग्राम रूपी यज्ञमें विधि पूर्वक सोमपान करनेकी समानहै इसमें संशय नहीं ॥ ३९ ॥ जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, मृत्युको प्राप्त हुए अनाथ ब्राह्मणको अपने स्कंधपर धारण करके ले जातेहैं उनको क्रमानुसार एक२ चरणपर एक २ यज्ञका फल प्राप्त होताहै अर्थात्—मृत्युको प्राप्तहुए अनाथ ब्राह्मण को जोस्मशानमें लेजातेहैं उनको बहुत पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ४० ॥ जो मृत्युको प्राप्तहुए अनाथ ब्राह्मणको स्कंधपर धारण करके चलतेहैं उन सत्कर्म करने वाले पुरुषोंको कुछ पाप वा अशुभ नहीं होता, केवल जलमें स्नानही करनेसे उनकी शीघ्र शुद्धिहो जातीहै ॥ ४१ ॥ जो अपना सगोत्र वा बंधु नहो ऐसे मृत्युको प्राप्त हुए

द्विजोत्तमम् । वहित्वाच दहित्वाच प्राणायामेनशुद्ध्यति ॥ ४२ ॥ अनुगम्येच्छयाप्रेतं ज्ञातिमज्ञाति मेववा । स्नात्वास चैलं स्पृष्ट्वाग्निंघृतं प्राश्यविशुद्ध्यति ॥ ४३ ॥ क्षत्रियं मृत मज्ञानाद्ब्राह्मणो यो नुगच्छति । एकाहमशुचिर्भूत्वा पंचगव्ये नशुद्ध्यति ॥ ४४ ॥ शवं च वैश्य मज्ञानाद्ब्राह्मणो ह्यनुगच्छति । कृत्वाशौचं द्विरात्रंच प्राणायामान् षड़ाचरेत्॥४५॥ प्रेतीभूतंतुयःशूद्रं ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः । अनुगच्छेन्नीयमानं त्रिरात्रमशुचिर्भवेत् ॥ ४६ ॥ त्रिरात्रेतुततःपूर्णे नदीं गत्वा समुद्रगाम् । प्राणायामशतंकृत्वा घृतंप्राश्य विशुद्ध्यति ॥ ॥४७॥ तस्माद्द्विजोमृतंशूद्रं नस्पृशेन्नचदाहयेत् । दृष्टेसूर्यात्र लोकेनशुद्धिरेषा पुरातनी ॥ ४८ ॥

इतिपाराशरीये धर्मशास्त्रेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

श्रेष्ठ ब्राह्मणको स्कंधपर धारण करके लेचलने से तथा उसको दाह करने के आशौचसे केवल प्राणायामहीके करनेसे शुद्ध होजाताहै ॥ ४२ ॥ जिस मृतकहुए पुरुषके पीछे अपनी इच्छासे जाय यदि वोह पुरुष अपनी जातिका हो वा अन्य जातिकाहो परन्तु उसके पीछे जायतो जानेसे वस्त्रों सहित स्नान करके अग्नि कास्पर्श करै और घृत चाखै तवशुद्ध होजाताहै ॥४३॥ जो अज्ञानी ब्राह्मण मृतक क्षत्रियके साथ जायतो एकदिन अशुचि रहकर तदनंतर पंचगव्यसे शुद्ध होताहै ॥ ४४ ॥ अज्ञानी जो ब्राह्मण मृत्युको प्राप्तहुए वैश्यके साथ जायतो दोदिन रात अशुचि रहकर छह प्राणायाम कर नैसे शुद्ध होताहै ॥ ४५ ॥ जो ज्ञानहीन ब्राह्मण मृतक शूद्रके साथ जाय तो तीनदिन पर्यंत अशुद्ध रहताहै ॥ ४६ ॥ फिर तदनन्तर तीन दिन के पश्चात् समुद्र गामिनी नदीके तटपर स्थित होकर सौ प्राणायाम करके औरघृत का भोजन करके शुद्ध होताहै ॥ ४७ ॥ इस कारण से ब्राह्मण मृतक शूद्र का स्पर्श तथा दाह क्रिया न करै । मृतक शूद्रका दर्शन करके सूर्य नारायणका दर्शन करने से शुद्धि होतीहै ॥ ४८ ॥

इतिपाराशरीये धर्मशास्त्रभाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अतिक्रोधादात्मानंबाद्वेषाद्वायदि बाभयात् । उद्बध्नीयात्स्त्री पुमान्बागतिरेषाविधीयते ॥ १ ॥ पूयशोणित संपूर्णेत्वंधेतमसि मज्जाति । षष्टिवर्षसहस्राणि नरकंप्रतिपद्यते ॥ २ ॥ नाशौचं नोदकं नाग्निं नाश्रुपातं च कारयेत् । वोढारोग्निप्रदातारः पाशच्छेदकरास्तथा ॥ ३ ॥ तप्तकृच्छ्रेणशुद्ध्यंतीत्येवमाहप्रजापतिः । गोभिर्हतंतथोद्बद्धंब्राह्मणेनतुघातितम् ॥४॥ संस्पृशंति तु ये विप्रा वोढारश्चाग्निदाश्चये । अन्येये चानुगंतारःपाशच्छेदकराश्चये ॥ ५ ॥ तप्तकृच्छ्रेणशुद्धास्ते कुर्युर्ब्राह्मण भोजनम् ॥ अनुडुत्सहितांगांचदद्युर्विप्रायदक्षिणाम् ।६। त्र्यहमुष्णंपिवेद्वारि त्र्यहमुष्णंपयःपिवेत् । त्र्यहमुष्णंपिवेत्सर्पिर्वायुंभक्षेद्दिनत्रयम् ॥ ७ ॥ षट्पलंतुपिवेदंभस्त्रिपलंतुपयः

जो पुरुष वा स्त्री अतिक्रोध तथा द्वेषसे अथवा लोक भयादिके कारण से अपने आप को फांसी आदि देकर मारडाले तो उसकी गति इस प्रकार की होती है ॥ १ ॥ वह पीब और रुधिर से परिपूर्ण अंधकार युक्त तम नामक नरक में डूबता है और उस नरक में साठ सहस्र वर्ष पर्यंत निवास करता है ॥ २ ॥ उसका आशौच, नहीं मानना और जलक्रिया वा अग्निक्रिया वा अश्रु पात नहीं करना उसकेले जानेबाले और दाह कर ने वाले और पाशच्छेदन (फांसी काटना) कर ने वाले ॥ ३ ॥ तप्त कृच्छ्र ब्रत से शुद्ध होते हैं यह ब्रह्मा जी ने कहा है ॥ जिस को गौवों ने मारा हो वा जो फांसी को प्राप्त हुआ हो अथवा जिस को ब्राह्मणों ने मारा हो ॥४॥ जो ब्राह्मण उस मृतक को स्पर्श करते हैं वा श्मशान को ले जाते हैं तथा दाह कर ते हैं अथवा उसके पीछे जाते हैं या जो पाशच्छेदन करते हैं ॥ ५ ॥ वे तप्त कृच्छ्र ब्रत कर के और सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन करा कर तथा सुपात्र ब्राह्मण को एक बैल और गौ दक्षिणा देकरशुद्ध होतेहैं ॥६॥ अब तप्त कृच्छ्र ब्रत की विधि कह ते हैं ॥ तप्त कृच्छ्र ब्रत कर ने वाला पुरुष तीन दिन पर्यंत छह२ पल उष्ण जल पीवे तदनंतर तीन दिन पर्यंत प्रति दिन चार२ पल उष्ण दुग्ध पान करै उसके पश्चात् तीन दिन पर्यंत एक२ पल उष्ण घृत पान करै फिर तीन दिन तक वायु का भोजन करै अर्थात्

१—एक पल ४ तोले का होता है ॥

पिबेत् । पलमेकंपिवेत्सर्पिस्तप्तकृच्छ्रं विधीयते ॥ ८ ॥ योवै समाचरेद्विप्रः पतितादिष्वकामतः । पंचाहंवादशाहं वा द्वाद शाहमथापिवा ॥ ९ ॥ मासार्द्धमासमेकंवा मासद्वयमथापि वा । अब्दार्द्धमब्दमेकंवा भवेदूर्ध्वंहितत्समः ॥ १० ॥ त्रिरा त्रंप्रथमेपक्षेद्वितीयेकृच्छ्रमाचरेत् । तृतीयेचैवपक्षेतुकृच्छ्रंसां तपनंचरेत् ॥ ११ ॥ चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पराकःपंचमेमतः । कु र्य्याच्चांद्रायणं षष्ठे सप्तमेत्वैंदव द्वयम् ॥ १२ ॥ शुद्ध्यर्थमष्टमे चैव षण्मासा त्कृच्छ्र माचरेत् । पक्ष संख्या प्रमाणेन सुव र्णान्यपि दक्षिणा ॥ १३ ॥ ऋतुस्नातातुयानारी भर्तारंनोप सर्पति । सामृतानरकंयाति विधवाचपुनःपुनः ॥ १४ ॥ ऋ-तुस्नातांतुयोभार्यां सन्निधौनोपगच्छति । घोरायांभ्रूणहत्या

निर्जल व्रत करै यह तप्त कृच्छ्रका विधान है ॥७॥८॥ जो ब्राह्मण विना इ-च्छा पतितादिकों से ५ दिन १० दिन वा १२ दिन॥९॥ अथवा १५ दिन तथा एक वा दो मास तथा छः मास एक वर्ष अथवा एक वर्ष से अधिक समय पर्य न्त संसर्ग करै तो एक वर्ष से अधिक संसर्ग करने से वह ब्राह्मण उसी के के तुल्य पतित होजाता है ॥ १० ॥ यदि पांच दिन पतितादिकों से संसर्ग हो तो उसकी शुद्धि के निमित्त तीन दिन पर्यंत उपवास करै और जो दश दिन संसर्ग रहे तो कृच्छ्रव्रत करै बारहदिन संसर्ग रहै तो तप्त कृच्छ्र करै ॥ ११ ॥ पन्द्रहदिन संसर्ग रहने में दश दिन पर्यंत उपबास करै और एक मास पर्यंत संसर्ग रहै तो पराक बृत करै दो मास संसर्ग होनेपर चा-द्रायण बृत करै और छः मास संसर्ग होनेपर दो चांद्रायण करै ॥ १२ ॥ यदि एक वर्ष पर्यंत संसर्ग रहै तो छः मास तक कृच्छ्र बृत करै और और जितने पक्षसंसर्ग रहाहो उतनेही सुवर्ण की दक्षिणा दे तबशुद्धहोता है, पूर्वोक्त प्रकारसे पहिलापक्ष ५ दिन का ऐसेही १० । १२ । १५ । दिन १ मास । २ । मास । ६ । मास । और १ वर्ष के क्रमसे ८ पक्षजानो ॥१३॥ जो ऋतु के पश्चात् स्नान करके स्त्री भर्ता के समीप नहीं जाती वह मृत्यु के अनंतर नरक को प्राप्त होती है और नरक भोगने के पश्चात् वारंबार बिधवा होती है ॥ १४ ॥ और जो पुरुष अपनी ऋतुस्नाता स्त्री के समीप नहीं

यां युज्यते नात्रसंशयः ॥ १५ ॥ दरिद्रं व्याधितंधूर्तं भर्तारं यावमन्यते । साशुनी जायते मृत्वा शूकरी च पुनःपुनः॥ १६॥ पत्यौजीवतियानारी उपोष्य व्रतमाचरेत् । आयुष्यंहरतेभर्तुःसानारीनरकंव्रजेत् ॥ १७ ॥ अपृष्ट्वाचैव भर्तारं यानारीकुरुतेव्रतम् । सर्वंतद्राक्षसान्गच्छे दित्येवंमनुरब्रवीत्॥१८॥ बांधवानां सजातीनां दुर्वृत्तंकुरुतेतुया । गर्भपातंचयाकुर्यान्न तां संभाषयेत्क्वचित् ॥ १९ ॥ यत्पापंब्रह्महत्यायां द्विगुणंगर्भपातने । प्रायश्चित्तं नतस्यास्तितस्यास्त्यागोविधीयते॥२०॥ ओघवाताहृतंबीजं यस्यक्षेत्रेप्ररोहति । सक्षेत्रीलभतेबीजं नबीजीभागमर्हति ॥ २१ ॥ तद्वत्परस्त्रियःपुत्रौ द्वौसुतौ कुंडगोलकौ । पत्यौजीवतिकुंडस्तु मृतेभर्तरिगोलकः ॥ २२ ॥

जाता वह बडीघोर गर्भहिंसा के पाप से युक्त होताहै इस में संशय नहीं है॥१५॥ जो स्त्री अपने दरिद्री, रोगी, वा धूर्त्त भी पति का अनादर करती है वह मृत्यु के पश्चात् वारंवार कूकरी वा शूकरी की योनि को प्राप्त होती है ॥ १६ ॥ पति के जीवित रहते जो स्त्री निराहार व्रत करती है वह पति की आयु को न्यून करती है और मृत्यु को प्राप्त होकर नरक को प्राप्त होती है ॥ १७ ॥ जो स्त्री पति की विना आज्ञा लिये व्रत करती है उसका फल राक्षस लेजाते हैं अर्थात् वह व्रत निष्फल होता है ऐसा मनुजी ने कहा है ॥ १८ ॥ जो स्त्री अपने बांधवों से अथवा अपने जाति वालों से दुराचरण करती है तथा जो स्त्री गर्भपात करती है उसस्त्री से कभी संभाषण न करै ॥ १९ ॥ जितना पाप ब्रह्महिंसामें होता है उससे द्विगुणा पाप गर्भपात करने में होता है उसका प्रायश्चित्त नहीं है अतएव उस स्त्री का त्यागही करना योग्य है ॥ २० ॥ जल और वायु के वेग से किसी मनुष्य का वीज किसी दूसरे मनुष्य के खेत में आकर उत्पन्न होजावै तो उस बीज के फलका भागी खेतवालाही होता है बीजवाले को भाग नहीं मिलता ॥ २१ ॥ इसीप्रकार कुंड और गोलक ये दो पुत्र जो परस्त्री से उत्पन्न होते हैं उस स्त्री केही पुत्र हैं वीर्यदान करनेवालेकेनहीं । पति के जीवित रहते जार जात पुत्र को कुण्ड कहते हैं और पति की मृत्यु होने के पश्चात् जारजात पुत्रको गोलक कहते हैं ॥ २२ ॥ औरस,क्षेत्रज तथा दत्तक और कृत्रिम

औरसः क्षेत्रजश्चैव दत्तः कृत्रिमकः सुतः। दद्यान्माता पिता वापि स पुत्रो दत्तको भवेत् ॥ २३ ॥ परिवित्तिःपरीवेत्तायया च परिविद्यते। सर्वेते नरकं यांति दातायाजकपंचमाः ॥२४॥ द्वौ कृच्छ्रौ परिवित्तेस्तु कन्यायाःकृच्छ्रएवच। कृच्छ्रातिकृच्छ्रौ दातुस्तु होता चांद्रायणं चरेत् ॥ २५ ॥ कुब्ज वामन षंडेषु गद्गदेषु जडेषु च। जात्यंधेवधिरे मूके न दोषःपरिविंदतः॥ ॥ २६ ॥ पितृव्यपुत्रः सापत्नः परनारीसुतस्तथा। दाराग्नि होत्रसंयोगे न दोषः परिवेदने ॥ २७ ॥ नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते पतौ ॥ पंचस्वापत्सुनारीणां पतिरन्यो विधीयते ॥ २८ ॥ मृते भर्तरि या नारी ब्रह्मचर्यव्रतेस्थिता। सामृता

यहभी पुत्रहैं। माता वा पिताने जो पुत्र किसी पुरुषको दियाहो वोह दत्तक पुत्र कहलाताहै ॥ २३ ॥ परिवित्ति और परिवेत्ता तथा जो कन्या परिवेत्ता से बिवाहीजाय, कन्यादान करने वाला और याजक [बिवाह कराने वाला] ये संपूर्ण पुरुष नरकमें जाते हैं। बड़े भ्राता के विवाह होने से पूर्व छोटे भ्राता का विवाह होतो बडे भ्राताको परिवित्ति और छोटे भ्राता को परिवेत्ता कहते हैं ॥ २४ ॥ जो बड़े भ्राताके विवाह होने से पहिले छोटे भ्राताका विवाह हुआ हो तो उसके दोषकी निवृत्तिके निमित्त वे दोनों भ्राता दो २ कृच्छ्रव्रत करैं और वह विवाहित कन्या एक कृच्छ्रव्रत करै और कन्यादान करनेवाला कृच्छ्र और अतिकृच्छ्र व्रत करै और होता चांद्रायण व्रत करै ॥ २५ ॥ जो बड़ा भ्राता कुबड़ा, बौना, नपुंसक अथवा स्पष्ट न बोलनेवाला मूर्ख तथा जन्मांध और बहिरा वा गूंगाहो तो परिवेदन का दोष नहीं है ॥ २६ ॥ यदि चचा वा ताऊ का पुत्र, सपत्नीका पुत्र अथवा अन्य स्त्री से उत्पन्न हुआ पुत्रबड़ा भ्राता हो तौ सन्तानोत्पत्ति वा अग्निहोत्र के लिये विवाह करलेने में कुछ दोष नहीं ॥ २७ ॥ जिस कन्या का वाग्दान होगया हो और विवाह न हुआ हो, ऐसी दशा में उसका पति यदि नष्ट होगया हो (अर्थात्—कहीं चला गया हो और पता न लगै) वा मृतक होगया हो, या सन्न्यासी हो जाय अथवा नपुंसक हो तौ इन पांच आपत्तियों में उस कन्या का दूसरे पतिके साथ विवाह कर देना चाहिये ॥ २८ ॥ पतिके मृत्युको प्राप्त होनेके अनंतर जोस्त्री ब्रह्मचर्य नियममें

लभते स्वर्गंयथाते ब्रह्मचारिणः ॥ २६ ॥ तिस्रः कोट्योऽर्ध कोटी च यानिलोमानिमानवे । तावत्कालं वसेत्स्वर्गे भर्त्तारं यानुगच्छति ॥ ३० ॥ व्याल ग्राही यथा व्यालं बलादुद्धरते विलात् । एवं स्त्री पतिमुद्धृत्य तेनैव सह मोदते ॥ ३१ ॥

इतिपाराशरीये धर्मशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

वृकश्वानशृगालादि दष्टोयस्तुद्विजोत्तमः। स्नात्वा जपेत्स गायत्रीं पवित्रां वेदमातरम् ॥ १ ॥ गवांशृंगोदकस्नानात्महा नद्योस्तुसंगमे । समुद्रदर्शनाद्वापिशुनादष्टः शुचिर्भवेत् ॥ २ ॥ वेदविद्या ब्रत स्नातः शुनादष्टो द्विजोयदि । सहिरण्योदके स्नात्वाघृतं प्राश्य विशुद्ध्यति॥३॥सब्रतस्तुशुनादष्टो यस्त्रिरात्र

स्थित रहतीहै वह मृत्युहोने के पश्चात् इसप्रकार स्वर्गको प्राप्त होतीहै जैसे ब्रह्मचारी स्वर्गको प्राप्त होतेहैं ॥ २६ ॥ पतिकी मृत्यु होनेके अनंतर जोस्त्री सती होकर पतिके साथ जातीहै वोहस्त्री जितने मनुष्यके शरीरमें रोम होते हैं उतने वर्ष पर्यंत स्वर्गवास करतीहै अर्थात् सतीस्त्री साढे तीन करोड वर्ष पर्यंत स्वर्गमें निवास करतीहै ॥ ३० ॥ जिस प्रकार सर्पको पकड़ने वाला (सपेरा) सर्पको बलकरके विल (भट्टे) मेंसे निकाल लेताहै इसी प्रकार वहस्त्री अपने पतिका पापोंसे उद्धार करके उसके साथ आनंद करतीहै॥३१॥

इतिश्रीपाराशरीयेधर्मशास्त्रेभाषाटीकायांचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

जिस ब्राह्मणको भेड़िये, कुत्ते, तथा गीदड़ आदिने काटाहो वह स्नानकरके गायत्री का जपकरै क्योंकि–गायत्री परम पवित्र और वेदोंकी माताहै॥१॥ जिसको श्वान आदिकोंने काटाहो वह गोशृंगसे शुद्ध कियेहुए जलसे स्नान करनेसे तथा पवित्र नदियों के संगममें (जहां दोपवित्र नदी मिली हों) स्नान करने से अथवा समुद्रका दर्शन करने सेभी शुद्धहोजाताहै॥२॥ यदि वेदाध्ययन रूप व्रत करके युक्त ब्राह्मणको कुत्तेने काटा हो तो वह सुवर्ण से शुद्ध किये हुए जल से स्नान करके और घृत भोजन करके शुद्ध होता है॥ ३ ॥ जो ब्राह्म तीन दिन का व्रतकर रहाहो और उसको कुत्ताकाटै

मुपावसेत् । घृतं कुशोदकं पीत्वा व्रतशेषं समापयेत् ॥ ४ ॥ अव्रतःसव्रतोवापि शुनादष्टो भवेद्द्विजः । प्रणिपत्यभवेत्पूतो विप्रैश्चक्षु निरीक्षितः ॥ ५ ॥ शुनाघ्रातावलीढस्य नखैर्विलिखितस्यच । अद्भिः प्रक्षालनं प्रोक्तमग्निना चोप चूलनम् ॥ ६ ॥ ब्राह्मणी तु शुनादष्टा जंबुकेन वृकेणवा । उदितंग्रह नक्षत्रं दृष्ट्वासद्यःशुचीभवेत् ॥ ७ ॥ कृष्णपक्षे यदा सोमो न दृश्येत कदाचन । यांदिशं व्रजते सोमस्तांदिशं चावलोकयेत् ॥ ८ ॥ असद्ब्राह्मणके ग्रामेशुनादष्टो द्विजोत्तमः । वृषं प्रदक्षिणी कृत्यसद्यःस्नात्वा शुचिर्भवेत् ॥ ६ ॥ चंडालेनश्वपाकेन गोभिर्विप्रैर्हतोयादि । आहिताग्निर्मृतो विप्रो विषेणात्मा हतो यदि ॥ १० ॥ दहेत्तं ब्राह्मणं विप्रो लोकाग्नौ मंत्र वर्जितम् । स्पृष्ट्वा चोह्य च दग्ध्वा च सपिंडेषु च सर्वदा ॥ ११ ॥ प्राजापत्यं चरेत्पश्चाद्विप्राणामनुशासनात् । दग्ध्वा

तो वह घृत और कुशोदक कापान करके तब शुद्धहोता है ॥४॥ जिस ब्राह्मण को कुत्तेने काटाहो वह व्रतीहो अथवा अव्रती परंतु ब्राह्मणों को प्रणामकरके उनकी दृष्टिमात्र से शुद्ध होजाता है ॥ ५ ॥ जिसको श्वानने चाटा हो वा सूंघा हो उसे जलसे प्रक्षालन करै और अग्नि से तप्त करैतो शुद्धिहोतीहै॥६॥ जोब्राह्मणी को श्वान, शृगाल, तथावृकादि ने काटाहो तो वह उदय होते हुए सूर्यचंद्रादि ग्रहों और नक्षत्रों का दर्शन करनेसेही शुद्ध होजाती है ॥७॥ जोकदाचित् कृष्णपक्षमें चंद्रमाका दर्शन नहो तोजिस दिशामें उसदिन चंद्रमा उदय हों उसदिशा कादर्शन करे ॥८॥ जिस ग्राममें श्रेष्ठ ब्राह्मण न हों और किसी ब्राह्मण को कुत्ता काटै तो वह स्नान पूर्वक वृषभ की प्रदक्षिणा करके शीघ्र शुद्ध होजाता है ॥९॥ जो अग्नि होत्री ब्राह्मण चांडाल वा श्वपचके हाथसे मारा गया हो अथवा उसेगौ वा ब्राह्मणोंने मारा हो तथा उसनेस्वयं विष खाकर आत्म घात किया हो ॥ १० ॥ तो उसके सपिंडों में से जो पुरुष उसकी क्रिया करै वह उस ब्राह्मण को बिनामंत्र के लौकिक अग्नि में दाह करै और उसे स्पर्श करके तथा उसके बिमान को उठा के और उसे दाह करके ॥ ११ ॥ ब्राह्मणों की आज्ञा से प्राजापत्य व्रत करै और दाह करने के अनन्तर उसकी अस्थि

स्थीनि पुनर्नीत्वा क्षीरैः प्रक्षालयेद् द्विजः ॥ १२ ॥ स्वेनाग्नि ना स्वमंत्रेण पृथगेतत्पुनर्दहेत् । आहिताग्निर्द्विजः कश्चित्प्र वसन्कालचोदितः ॥ १३ ॥ देहनाशमनुप्राप्तस्तस्याग्निर्व सते गृहे । प्रेताग्निहोत्रसंस्कारः श्रूयतांमुनिपुंगवाः ॥१४॥ कृष्णाजिनंसमास्तीर्य कुशैस्तु पुरुषाकृतिम् । षट्शतानिशतं चैव पलाशानां च वृंततः ॥ १५ ॥ चत्वारिंशच्छिरेदद्याच्छतं कंठे तुविन्यसेत् । बाहुभ्यांदशकं दद्यादंगुलीषु दशैवतु॥ १६॥ शतं तुजघनेदद्या द्विशतंतूदरे तथा । दद्यादष्टौ वृषणयोः पंचमेढ्रेतुविन्यसेत् ॥ १७ ॥ एकविंशति मूरुभ्यां द्विशतंजा नुजंघयोः । पादांगुष्ठेषुषड्दद्या यज्ञपात्रं ततोन्यसेत् ॥ १८ ॥ शम्यां शिश्ने विनिक्षिप्य अरणिं मुष्कयोरपि । जुहूं च- दक्षिणे हस्ते बामे तूपभृतं न्यसेत् ॥ १९ ॥ पृष्ठे तूलूखलंद-

यों को दूध में धोवै ॥ १२ ॥ फिर उन अस्थियों को मंत्र पूर्वक अपनी [गार्हपत्य] अग्नि में पृथक् दाह करै हे मुनीश्वरों ! जो अग्नि होत्री ब्राह्मण प्रदेश में काल बश से ॥ १३ ॥ मृत्युको प्राप्त हुआ हो और उसकी अग्निहोत्र करनेकी अग्नि उसके घर पर स्थित हो तो उसका अग्नि संस्कार जिस प्रकार होना चाहिये सो श्रवण करो ॥ १४ ॥ चिताकी भूमि पर कृष्णमृगचर्म को वि- छायकर उसके ऊपर कुशाओं का पुरुषाकार बनाबै और उस कुशा पुरुष पर सातसौ ढाककी डालियें इस प्रकार स्थापन करै ॥ १५ ॥ चालीस तो शिरपर स्थापन करै और सौ कंठ में, दश भुजाओं पर धारण करै और दश अंगुलियों पर रक्खै ॥ १६ ॥ और सौ नाभि पर तथा दोसौ उदर पर स्थापन करै और आठ डालियें दोनों वृषणों (अण्डकोश) पर और पांच लिंग पर रक्खै ॥ १७ ॥ इक्कीस ऊरु नितंबों [के नीचे] और दोसौ जानु और जंघा ओं पर और छह चरण के अंगूठों पर धारण करै ॥ तदनन्तर अग्निहोत्र के पात्रों को स्थापन करै ॥ १८ ॥ शिश्न में शम्या को और अण्डकोश में अरणिको स्थापन करै, दक्षिण हस्त में जुहू [स्रुवा] और बाम हस्त में उपभृत को स्थापन करै ॥ १९ ॥ पृष्ठतल में उलूखल और मूशल रक्खै और

द्यात्पृष्ठेच मुशलंन्यसेत् । उरसि क्षिप्य दृषदं तंडुलाज्य ति-
लान्मुखे ॥ २० ॥ श्रोत्रे तु प्रोक्षणीं दद्या दाज्यस्थालीं च च
क्षुषेः । कर्णेनेत्रे मुखेघ्राणे हिरण्यशकलं न्यसेत् ॥ २१ ॥
अग्निहोत्रोपकरण मशेषं तत्र विन्यशेत् । असौ स्वर्गाय
लोकाय स्वाहेत्ये काहुतिं सकृत् ॥२२॥ दद्यात्पुत्रोथवा भ्राता
प्यन्योवापिचवान्धवः । यथा दहन संस्कारस्तथा कार्यं विच-
क्षणैः ॥ २३ ॥ ईदृशंतु बिधिंकुर्याद् ब्रह्म लोक गतिस्मृता
। दहंतियेद्विजास्तंतु तेयांति परमांगतिं ॥ २४ ॥ अन्यथा
कुर्वते कर्म स्वात्म बुद्ध्याप्रचोदिताः । भवंत्यल्पायुषस्तेवै पतं
ति नरकेऽशुचौ ॥ २५ ॥

इतिश्री पाराशरीये धर्मशास्त्रे पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥



अतःपरं प्रवक्ष्यामि प्राणिहत्यासु निष्कृतिम् । पराशरेणपू
र्वोक्तांमन्वर्थे पिचविस्तृतां ॥ १ ॥ क्रौंच सारस हंसांश्च चक्र

हृदय में दृषद् (सिल) स्थापन करै तथा मुख में चावल घृत और तिल ॥२०॥ और कर्ण में प्रोक्षणी और आंखों में आज्यस्थाली स्थापन करै और कर्ण, नेत्र, तथा मुख और नासिका में सुवर्ण का खण्ड रक्खै ॥ २१ ॥ इस प्रकार अग्निहोत्र की सम्पूर्ण वस्तु वहां पर स्थापन करके उस मृतक अग्निहोत्रीका पुत्र वा भ्राता तथा जो कोई उसका बांधव हो वह "असौस्वर्गाय लोकाय स्वाहा,, इस मंत्र से एक आहुति दे तदनन्तर दाह संस्कार की विधि के अनुसार उसकी दाह क्रिया करै ॥ २२ ॥ २३ ॥ इस प्रकार बिधि करने से उस मृतक को ब्रह्म लोककी प्राप्ति होनी है और जो ब्राह्मण उसको दाह करते हैं वे भी परम गति को प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥ जो अपनी बुद्धि के अनुसार अन्यथा कर्म करते हैं वे स्वल्पायु होते हैं और अशुचिनामक नरक को प्राप्त होते है ॥ २५ ॥

इति श्री पाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥



इस के अनंतर प्राणिमात्र कीहिंसा का प्रायश्चित्त कहतेहैं जोकि पाराशर जीने पूर्व वर्णन किये हैं और मनुजी ने भी बिस्तार पूर्वक कहे हैं ॥ १ ॥

वाकं चकुक्कुटं । जालपादं च शलभं हत्वाहो रात्रतः शुचिः ॥ २ ॥ बलाकाटिट्टिभौ वापि शुकपारावतावपि । पाठीन बकघाती च शुद्ध्यते नक्तभोजनात् ॥ ३ ॥ वृक काक कपोतानांसारी तित्तिरघातकः । जलमध्यउभे संध्येप्राणायामेन शुद्ध्यति ॥ ४ ॥ गृध्रश्येनशशादीनामुलूकस्यचघातकः । अपक्वाशी दिनंतिष्ठेद्रात्रौमारुतभोजनः ॥ ५ ॥ चटकाया मयूरस्य कोकिलाखंजरीटके । लाविकारक्तपक्षेषु शुद्ध्यते नक्तभोजनात् ॥ ६ ॥ कारंडव चकोराणां पिंगला कुर रस्य च भारद्वाजादिकंहत्वा शिवंसंपूज्य शुद्ध्यति ॥७॥ भेरुंडचाषभासांश्च पारावतकपिंजलौ पक्षिणां चैवसर्वेषामहोरात्र मभोजनम् ॥ ८ ॥ हत्वा मूषक मार्जार सर्पाजागर डुंडु

कुंज सारस, हंस, चकुवा, कुक्कट और जालपाद अर्थात् जिन पक्षियों के चरण जुडे हुए हों तथा टिड्डी इन मे से किसी को मारकर एकदिन रातके उपवास से शुद्ध होता है ॥ २ ॥ वालकी (वगली) टटीरा, तोता तथा पारावत मछली और वगला इन में से किसी भी जीव की हिंसा करने वाला नक्तभोजन व्रत (दिन में भोजन न करना रात्रि में एक वार भोजन करना) से शुद्ध होता है ॥ ३ ॥ भेडिया काक कवूतर मैना तित्तर इन में से किसी जीव की हिंसा की हो तो दोनों संध्याओं के समय जल में स्थित होकर प्राणायाम करने से शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ जिसने गिद्ध, वाजः खरगोश तथा उलूक (उल्लू) की हिंसा की हो वह दिन भर पक्वान्न भोजन न करै और रात्री में वायु भक्षण करके स्थित रहै अर्थात्—कुछ भोजन न करै ॥ ५ ॥ चटका मयूर कोकिला ममोला तथा लाविका (वटेर) और लाल पंख वाले पक्षियों में से किसी एक की हिंसा हुई हो तो नक्तभोजन व्रत से शुद्ध होता है ॥ ६ ॥ मुर्गावी चकोर चाम चिड (चिमगादर) टटीरी तथा पपीहा इन में से किसी का बध हुवा हो तो शिव जी का पूजन करने से शुद्ध होता है ॥ ७ ॥ भेरुंड नीलकंठ, भास, और पारावत, कपिंजल तथा सम्पूर्ण पक्षियों में से जिसने किसी एक की हिंसा की हो वह एक दिन रात निराहार व्रत करने से शुद्ध होता है ॥ ८ ॥ चूहा विल्ली

भान् । कृसरंभोजयेद्विप्रान्लोहदंडचं दक्षिणा ॥ ९ ॥ शिशुमारंतथागोधां हत्वाकूर्मंचशल्लकम् । वृंताकफलभक्षी वाप्यहोरात्रेणशुद्ध्यति ॥ १० ॥ वृकजम्बुकऋक्षाणां तरक्षूणां च घातकः । तिलप्रस्थंद्विजेदद्याद्वायुभक्षोदिनत्रयम् ॥ ११ ॥ गजस्य च तुरंगस्यमहिषोष्ट्रस्यघातने । प्रायश्चित्तमहोरात्रं त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ १२ ॥ कुरंगंवानरंसिंहं चित्रंव्याघ्रं च घातनम् । शुद्ध्यतेसत्रिरात्रेण विप्राणांतर्पणेन च ॥ १३ ॥ मृगरोहिद्वराहाणां भवेर्वस्तस्यघातकः । अफालकृष्टमश्नीयादहोरात्रमुपोष्यसः ॥ १४ ॥ एवंचतुष्पदानां च सर्वेषांवनचारिणाम् । अहोरात्रोषितस्तिष्ठेज्जपन्वैजातवेदसम् ॥ १५ ॥ शिल्पिनंकारुकंशूद्रं स्त्रियं वा यस्तुघातयेत् । प्राजापत्यद्वयं

सर्प अजगर तथा जल सर्प इन में से किसी की हिंसा हुई हो तो सुपात्र ब्राह्मणों को खिचडी का भोजन कराने और लोह दंड की दक्षिणा देने से शुद्ध होता है ॥ ९ ॥ शिसुमार गोह तथा कच्छप और शिल्लू सांप इन मेंसे किसी एकको मारकर वा वैंगनके फलको खानेवाला अहो रात्रव्रत करनेसे शुद्ध होता है ॥ १० ॥ भेडिया गीदड ऋच्छ तथा व्याघ्र को मारकर सुपात्र ब्राह्मण को एक प्रस्थ तिलदे और तीन दिन पर्यंत निर्जल व्रत करै तो शुद्ध होता है। (प्रगट हो कि एक प्रस्थ ६४ तोले का होता है)॥ ११ ॥ हाथी, घोड़ा, भैंसा तथा ऊंटकी हिंसा होगईहोय तो अहोरात्रव्रत करै और तीनों संध्याओं के समय स्नान करै ॥ १२ ॥ मृग, वानर तथा सिंह, चीता वा व्याघ्रकी हिंसा करके तीनदिन पर्यंत उपवास करै और सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन जिमावै ॥ १३ ॥ जिसने मृगरोहित (मृगी या रोहू मछली) सूकर तथा भेड़ और बकरेकी हिंसा की हो वह अहोरात्र उपवास करै और विना हलसे जोतेहुये अन्न (नीवारादि) को भक्षण करके शुद्ध होता है इसीप्रकार संपूर्ण चतुष्पद और वनचर जन्तुओं में से किसी एक जन्तु की हिंसा करनेवाला गायत्री का जप करताहुआ अहोरात्र व्रत करै ॥ १५ ॥ शिल्पी, कारुक (कारीगर) शूद्र तथा स्त्री को मारनेवाला पुरुष दो प्राजा

कृत्वावृषैकादशदक्षिणा ॥ १६ ॥ वैश्यंवाक्षत्रियंवापि निर्दोषंयोभिघातयेत् । सोतिकृच्छ्रद्वयंकुर्याद्गोविंशद्दक्षिणांददेत् ॥१७॥ वैश्यं शूद्रं क्रियासक्तं विकर्मस्थं द्विजोत्तमम्। हत्वा चांद्रायणंतस्य त्रिंशद्गाश्चैवदक्षिणा॥ १८ ॥ चांडालंहतवान् कश्चिद्ब्राह्मणोयादिकंचन । प्राजापत्यंचरेत्कृच्छ्रं गोद्वयंदक्षिणांददेत् ॥ १९ ॥ क्षत्रियेणापिवैश्येन शूद्रेणैवेतरेणच । चांडालस्यबधेप्राप्ते, कृच्छ्रार्द्धेनविशुद्धयति ॥ २० ॥ चोरःश्वपाक श्चांडालो विप्रेणाभि हतोयदि । अहोरात्रोषितः स्नात्वापंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ २१ ॥ श्वपाकंचापिचांडालंविप्रः संभाषते यदि । द्विजसंभाषणं कुर्यात्सावित्रीं च सकृज्जपेत् ॥ २२ ॥ चांडालैः सहसुप्तं चत्रिरात्रमुप वासयेत्। चांडालैकपथंगत्वा गायत्री स्मरणा च्छुचिः ॥ २३ ॥ चांडाल दर्शने स

पत्य व्रत कर के ग्यारहवृर्षभों कादान करने से शुद्ध होता है ॥ १६ ॥ निरपराधी वैश्य वा क्षत्रिय की हिंसा करके दो अतिकृच्छ्रव्रत करै और बीस गौ दक्षिणादे ॥ १७ ॥ अपने धर्मकी क्रिया में आसक्त वैश्य वा शूद्रको तथा कुकर्मी ब्राह्मण को मारकर चांद्रायण व्रत कर के तीस गोदान करने से शुद्ध होता है ॥ १८ ॥ जो किसी ब्राह्मण से चांडालकी हिंसा हुई हो तो वह कृच्छ्र और प्राजापत्य व्रत करके दो गौ दक्षिणा दे ॥ १९ ॥ जो क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र अथवा किसी अन्य जाति ने चांडाल की हिंसा की हो तो वह अर्द्ध कृच्छ्रव्रत करके शुद्ध होता है ॥ २० ॥ जो किसी ब्राह्मणने चोरी करनेवाले श्वपच वा चांडालकी हिंसा की तो वह स्नान पूर्वक अहोरात्रव्रत करके पंचगव्यपान करने से शुद्ध होता है ॥२१॥ यदि कोई ब्राह्मण श्वपच वा चाडालसे संभाषण करै तो वह ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मण से संभाषण करके एकबार गायत्री मंत्र का जप करै ॥ २२ ॥ जो चांडालों के साथ एक स्थान वा एक वृक्षकी छाया में सोया हो तो तीन दिनरात पर्यंत उववास करै । और एक मार्ग में चांडालके साथ चल स्नान करै और (जितने चरण चला हो उतने गायत्री मंत्रोंका स्मरणकरने से शुद्ध होता है ॥ २३ ॥ चांडालका दर्शन करके शीघ्र सूर्यका दर्शन

द्य आदित्य मवलोकयेत् । चांडालस्पर्शनेचैव सचैलं स्नान माचरेत् ॥ २४ ॥ चांडालखातवापीषु पीत्वा च सलिलं द्विजः । अज्ञानाच्चैकनक्तेन त्वहोरात्रेण शुद्ध्यति ॥ २५ ॥ चांडालभांडं संस्पृष्ट्वा पीत्वा कूपगतं जलम् । गोमूत्र या वकाहारस्त्रिरात्राच्छुद्धिमाप्नुयात् ॥ २६ ॥ चांडालघट संस्थंतु तत्तोयंपिवते द्विजः । तत्क्षणात्क्षिपतेयस्तु प्राजापत्यं समाचरेत् ॥२७॥ यदि न क्षिपते तोयं शरीरे यस्य जीर्यति। प्राजापत्यं न कर्तव्यं कृच्छ्रं सांतपनं चरेत् ॥ २८ ॥ चरेत् सां तपनंविप्रः प्राजापत्यमनंतरः । तदर्धंतु चरेद्वैश्यः पादं शूद्र स्यदापयेत् ॥ २९ ॥ भांडस्थमंत्यजानां तु जलं दधिपयःपि

करै और चांडालका स्पर्श करके वस्त्रों सहित स्नान करै तब शुद्ध होता है ॥ २४ ॥ यदि ब्राह्मण क्षत्री वा वैश्य विनाजाने चांडालकी बनाईहुई बावड़ी में जलपान करले तौ एकवार रात्रिमें भोजन करके (दिनमें भोजन न करके) एक दिन रातमें शुद्ध होताहै ॥ २५ ॥ जिस कुवेमें चांडाल के पात्र से छुआ हुआ जल गिरा हो उस कुए के जलको पीकर तीन दिन पर्यंत गोमूत्र पान और यव का भोजन करनेसे शुद्ध होता है (इससे प्रकट हुआ कि जिस कुएमें यवनों का पात्र जो चांडालके समान हैं पड़ता हो उस कुए का जल भी अपेय है जो ब्राह्मण चांडालके घडेका जल पीकर तत्काल उगल दे वा वमनकरके निकालदे तौ वह प्राजापत्यव्रत से शुद्ध होता है ॥ २६ ॥ २७ ॥ यदि उस जलको न उगले और वह जल शरीर में पचजाय तौ प्राजापत्यसे शुद्ध नहीं होता कृच्छ्र सांतपन करनेसे शुद्ध होता है ॥ २८ ॥ ब्राह्मणको उसकी शुद्धिके निमित्त कृच्छ्र सांतपन करना चाहिये और क्षत्रियको प्राजापत्यव्रत करना चाहिये । वैश्यको उसकी शुद्धिके निमित अर्धप्राजापत्य करना उचित है और शूद्र चौथाई प्राजापत्य करनसेही शुद्ध होजाताहै ॥२९॥ जोब्राह्मण, क्षात्रिय, तथा वैश्य अन्त्यजों (रजकादिकों) के पात्रका जल, दही तथा दुग्ध विनाजाने पान करले तौ ब्रह्मकूर्च उपवास करनेसे शुद्ध होता है और शूद्र एकदिन उपवास करने

वेत्। ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रश्चैव प्रमादतः ॥ ३० ॥ ब्रह्मकूर्चोपवासेन द्विजातीनां तु निष्कृतिः। शूद्रस्यचोपवासेन तथादानेन शक्तितः ॥ ३१ ॥ भुंक्ते ज्ञानाद्द्विजश्रेष्ठश्चांडालान्नंकथंचन। गोमूत्रयावकाहारो दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥ ३२ ॥ एकैकं ग्रासमश्नीयाद्गोमूत्रे यावकस्यच। दशाहंनियमस्थस्य व्रतंतत्तु विनिर्दिशेत् ॥ ३३ ॥ अविज्ञातस्तु चांडालो यत्रवेश्मनितिष्ठति। विज्ञातउपसंन्यस्य द्विजाः कुर्युरनुग्रहम् ॥३४॥ मुनिवक्त्रोद्गतान्धर्मान्गायंतोवेदपारगाः। पतंतमुद्धरेयुस्तं धर्मज्ञाःपापसंकटात् ॥ ३५ ॥ दध्नाचसर्पिषा चैवक्षीरगोमूत्रयावकम्। भुंजीतसहभृत्यैश्च त्रिसंध्यमवगाहनम् ॥ ३६ ॥ त्र्यहंभुंजीतदध्ना च त्र्यहंभुंजीत सर्पिषा ॥ त्र्यहंक्षीरेणभुंजीत एकैकेनदिनत्रयम् ॥ ३७ ॥ दधि-

से तथा यथाशक्ति सुपात्र ब्राह्मणको दान देने से शुद्ध होता है ॥ ३० ॥ ॥३१॥ जो ब्राह्मण अज्ञान से चांडालका अन्न भोजन करले तौ दशादिन पर्यंत गोमूत्र और यवका भोजन करनेसे शुद्ध होता है॥ ३२ ॥ प्रतिदिन दश दिन पर्यंत गोमूत्र और यवका एक २ ग्रास भक्षण करके नियम में स्थित रहकर व्रत को समाप्त करै तौ दश दिन में शुद्ध होता है ॥ ३३ ॥ जो विना जानेहुए किसीके घर पर चाण्डाल स्थित हो और वह घरवाला उसके जाननेके अनन्तर उसे निकालदे तौ जिसके घर पर चाण्डाल रहा था उस पर ब्राह्मण कृपा करैं ॥ ३४ ॥ अर्थात् मुनियोंके मुखसे कहे हुए धर्मोंको गायकर वेद पारंगत धर्मज्ञ ब्राह्मण पतित होतेहुए उस पुरुष को पापके दुःखसे उद्धार करैं ॥ ३५ ॥ अब उस पतितका प्रायश्चित कहते हैं, अपने कुटुम्ब और भृत्यादि सहित दधि घृत और दुग्धके साथ यवान्न भोजन करै और गोमूत्र पान करै॥ तथा त्रिकालमें स्नान करै तौ शुद्ध होता है ॥ ३६ ॥ तीन दिन दहीसे खाय और तीन दिनघृतके साथ भोजन करै और तीन दिन दुग्धसे भोजन करै एक२से तीन२दिन भोजन करै॥३७॥

क्षीरस्य त्रिपलंपलमेकं घृतस्यतु । दुष्टस्यान्नं न भुंजीत नोच्छिष्टं कृमि दूषितम् ॥ ३८ ॥ भस्मनातु भवेच्छुद्धि रुभयोः कांस्यताम्रयोः । जलशौचेन वस्त्राणां परित्यागेन मृण्मयम् ॥ ३९ ॥ कुसुंभगुडकार्पासं लवणं तैल सर्पिषी॥ द्वारे कृत्वातु धान्यानि दद्याद्वेश्मानि पावकम् ॥४०॥ एवंशुद्ध स्ततः पश्चात्कुर्याद्ब्राह्मणतर्पणम् । त्रिशतं गावृषं चैकं दद्या द्विप्रेषु दक्षिणाम् ॥ ४१ ॥ पुनर्लेपनखातेन होमजाप्येन शुद्ध्यति । आधारेण च विप्राणां भूमिदोषो न विद्यते ॥ ४२ ॥ चांडालैः सह संपर्कं मासं मासार्द्धमेववा । गोमूत्रयावका हारो मासार्द्धेन विशुद्ध्यति ॥ ४३ ॥ रजकी चर्मकारी च

जिस पुरुषका अंतःकरण दुष्ट हो उसका अन्न तथा उच्छिष्ट अन्न और जो कृमि आदिकोंने दूषित किया हो ऐसे अन्न का भोजन न करै । दही दूध तीन २ पल और घृत एकपल इसप्रकार भोजन करै ॥ ३८ ॥ अब जिस स्थानमें चांडाल स्थित रहा हो उस स्थानमें स्थितद्रव्यों की तथा उस स्थान की शुद्धि कहते हैं । कांसी और तांबे की शुद्धि भस्मसे होती है, और वस्त्रों की शुद्धि जल से होती है तथा मृत्तिका के पात्रों का त्यागदेना उचित है ॥३९॥ कुसुम्भ, गुड, कपास और लवण, तैल, घृत तथा धान्यादिकों को घरके द्वारसे बाहर निकालकर घर में अग्नि देदे अर्थात्-घरकी संपूर्ण भूमि को अग्नि से तप्त करै ॥ ४० ॥ तदनन्तर घर को गोमयादि से शुद्ध कर के और आप पूर्वोक्त व्रतसे शुद्ध होकर उस घर में सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन कराकर उन्हें तीनसौ गौ और एक वृष दक्षिणा में दे ॥ ४१ ॥ लीपने, खोदने, तथाहोम, जपइत्यादिक करनेसेभी भूमि शुद्ध होती है और ब्राह्मणों के आधार (आसानादिक) से भूमि दोष नहीं होता अर्थात्-यदि लिपीहुई भूमीके ऊपर ब्राह्मण बैठजाय तो भूमी अशुद्ध नहीं होती अन्य जातिकी स्थितिसे भूमी अपवित्र होतीहै इसकारण उसे फिर शुद्ध करना चाहिये ॥ ४२॥ जो १ मास वा १ पक्ष पर्यंत चांडालोंके साथ संसर्ग रहै तो अर्द्ध मास पर्यंत गोमूत्रपान और यवाहार करने से शुद्ध होता है ॥ ४३ ॥ यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्रके घरमें धोवन,

लुब्धकी वेणुजीविनी । चातुर्वर्ण्यस्यतुगृहे ह्यविज्ञातातु तिष्ठति ॥ ४४ ॥ ज्ञात्वातु निष्कृतिं कुर्यात्पूर्वोक्तस्यार्द्ध-मेवतु । गृहदाहं न कुर्वीत शेषं सर्वं च कारयेत् ॥ ४५ ॥ गृहस्याभ्यंतरं गच्छेच्चांडालोयदिकस्यचित् । तमागाराद्वि-निःसार्यमृद्भांडंतुविसर्जयेत् ॥ ४६ ॥ रसपूर्णंतुमृद्भांडं न त्य जेत्तुकदाचन । गोमयेनतुसंमिश्रैर्जलैः प्रोक्षेद्गृहंतथा ॥४७॥ ब्राह्मणस्यव्रणद्वारे पूयशोणितसंभवे । कृमिरुत्पद्यतेयस्यप्राय-श्चित्तंकथंभवेत् ॥ ४८॥ गवांमूत्रपुरीषेण दधिक्षीरेणसर्पिषा। त्र्यहंस्नात्वा च पीत्वा च कृमिदष्टःशुचिर्भवेत् ॥ ४९ ॥ क्षत्रियो पिसुवर्णस्यपंचमाषान्प्रदायतु । गोदक्षिणांतु वैश्यस्याप्युप वासं विनिर्दिशेत् ॥ ५० ॥ शूद्राणांनोपवासः स्याच्छूद्रोदाने-

चमारी तथा लुब्धकी (व्याधकी स्त्री) अथवा बांसका कार्य करनेवाली बिनाजाने रहै ।। ४४ ॥ तौ जाननेके पश्चात् जो प्रायश्चित्त पहिले चांडाल के अज्ञात स्थितरहनेमें कहा है उससे आधा प्रायश्चित्त करै केवल गृहदाह न करै और संपूर्ण प्रायश्चित्त करै॥४५॥ यदि किसीके घर के भीतर कोई चांडाल चलाजावै तौ उसे घर से बाहर निकाल कर मिट्टी के पात्रोंको त्यागदे ॥ ४६ ॥ जो मिट्टीके पात्र घृतादिक रसोंसे परिपूर्ण हों उनको न त्यागै । तदनंतर गोमय (गौका गोबर) और जल से घर को लीपै ॥ ४७ ॥ (प्र०) यदि ब्राह्मणके व्रग में पीव और रुधिर हो और कृमि उत्पन्न होजायँ तौ उस का प्रायश्चित्त क्या है ॥४८॥ (उत्तर) जिस ब्राह्मणको व्रण में कृमिने काटाहो वह गौके मूत्र गोवर, दही, दूध और घृतमें तीनदिन स्नानकरके और इन्हींपांचों वस्तुओंको मिलाकर पान करनेसे शुद्ध होता है।।४९।। और यदि क्षत्रियके व्रणमें कृमिपडगयेहो तौ सुपात्र ब्र ह्मणको पांच माशे सुवर्ण दान देकर तथा वैश्य गोदान और उपवास करके शुद्ध होताहै ।।५०।। शूद्रको उपवास करनेकी आज्ञा नहींहै वह केवल दान देनहीसे शुद्ध होजाता है । जब ब्राह्मण "अच्छिद्रमस्तु" ऐसा वचन उच्चा-

नशुद्ध्यति। अच्छिद्रमितियद्वाक्यंवदंति क्षितिदेवताः॥ ५१॥ प्रणम्यशिरसाग्राह्यमग्निष्टोमफलंहितत्। जपच्छिद्रंतपच्छिद्रं यच्छिद्रं यज्ञकर्मणि॥ ५२॥ सर्वंभवतिनिश्छिद्रं ब्राह्मणैरुपपादितम्। व्याधिव्यसनिनिश्रांते दुर्भिक्षेह्यथवाभये ॥५३॥ उपवासोव्रतोहोमो द्विजसंपादितानि वा। अथवा ब्राह्मणास्तुष्टाः सर्वेकुर्वंत्यनुग्रहम् ॥ ५४ ॥ सर्वान् कामनवाप्नोतिद्विज संपादितैरिह। दुर्बलेऽनुग्रहः प्रोक्तस्तथा वैबालवृद्धयोः॥५५॥ततोऽन्यथाभवेद्दोष स्तस्मान्नानुग्रहः स्मृतः। स्नेहाद्वायदि वा लोभाद्भयाद ज्ञानतोपिवा॥ ५६॥ कुर्वंत्यनुग्रहं येतु तत्पापंतेषु गच्छति॥ स्वस्थस्यमूढा कुर्वंति वदंत्यनियमंतुये ॥५७॥ ते तस्य विघ्नकर्तारः पतंति नरकेऽशुचौ॥ स्वयमेव व्रतं कृत्वा ब्राह्मणंयोवमन्यते॥५८॥ वृथा तस्योपवासः

रण करैं तब मस्तक नवाय कर और प्रणाम करके उस वचनको ग्रहण करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। जपमें तथा तपमें अथवा यज्ञमें छिद्र हो ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ और ब्राह्मण उसे "अच्छिद्रमस्तु" कहदें तौ वह सम्पूर्ण कर्म निष्छिद्र होजाता है। व्याधि, व्यसन, थकावट तथा दुर्भिक्ष अथवा किसीका भय हो तौ ॥ ५३ ॥ जो उपवास, व्रत तथा होम इत्यादिक ब्राह्मणोंकी आज्ञासे कियेजावें और वे विधिपूर्वक न होसकें तब यदि सम्पूर्ण ब्राह्मण प्रसन्न होकर उस उपवासादि करनेवालेपर अनुग्रह करके "अच्छिद्रमस्तु" यह वचन कहैं ॥ ५४ ॥ तौ उन उपवासादिकों से संपूर्ण कामनाओंकी प्राप्ति होती है। दुर्बल तथा बालक और बृद्ध के ऊपर कृपा करनी योग्य है ॥ ५५ ॥ इनके सिवाय और किसी पुरुषपर व्रत होम आदिकमें अनुग्रह करनेसे दोष होता है। स्नेहसे वा लोभसे अथवा भयसे तथा अज्ञान से ॥ ५६ ॥ जो अनुग्रह करते हैं वे उस पतितके पापमें भागी होते हैं। जो मन्दबुद्धि पुरुष स्वस्थोंके लिये नियमका उपदेश नहीं करते ॥ ५७ ॥ उनके प्रायश्चित्तमें विघ्न करनेवाले वे पुरुष अशुचि नाम नरक में गिरते हैं जो पुरुष ब्राह्मण से आज्ञालिये विना अपने आपही प्रायश्चित्तके निमित्त व्रत करते हैं ॥ ५८ ॥ उनका व्रत निष्फल होता है उन

स्यान्न स पुण्येनयुज्यते। स एव नियमोग्राह्योयमेकोपिवदेद्
द्विजः ॥ ५९ ॥ कुर्याद्वाक्यं द्विजानांतु अन्यथा भ्रूणहा भवेत् ।
ब्राह्मणा जंगमंतीर्थं तीर्थभूता हि साधवः ॥६०॥ तेषांवाक्यो
दके नैव शुद्ध्यंतिमलिनाजनाः । ब्राह्मणा यानि भाषंते मन्यंते
तानिदेवताः ॥ ६१ ॥ सर्वदेवमयोविप्रो नतद्वचनमन्यथा ।
उपवासोव्रतंचैव स्नानंतीर्थंजपस्तपः ॥ ६२ ॥ विप्रैःसंभाषि-
तं यस्यसंपूर्णंतस्यतत्फलम् । अन्नाद्येकीटसंयुक्ते मक्षिकाके-
शदूषिते ॥ ६३ ॥ तदंतरास्पृशेच्चापः तदन्नंभस्मनास्पृशेत् ।
भुंजानश्चैवयोविप्रः पादंहस्तेनसंस्पृशेत् ॥ ६४ ॥ स्वमुच्छिष्ट
मसौभुंक्तेयो भुंक्तेभुक्तभाजने । पादुकास्थोनभुंजीत पर्यंक-
स्थःस्थितोपिवा ॥ ६५ ॥ श्वानचांडालदृक्चैव भोजनंपरि

को उस व्रतका पुण्य नहीं होता । जिस नियम (व्रत) के करनेके निमित्त
एक ब्राह्मण भी आज्ञा दे वह नियम करने योग्य है ॥ ५९ ॥ श्रेष्ठ ब्राह्मणों
का वाक्य अवश्य मानने योग्यहै उनका बचन उलंघन करने से गर्भ हिंसा
का पाप होता हैं ब्राह्मण जंगम (घर बैठे कृतार्थ करनेवाला) तीर्थहै और
साधु भी तीर्थ हैं ॥ ६० ॥ मलिन (पापी पुरुष) उन ब्राह्मणोंके वाक्यरूप
जलसे शुद्ध होतेहैं । उत्तम ब्राह्मण जो वचन कहतेहैं उसे देवताभी मानतेहैं ॥६१॥
वेदाभ्यासी सदाचारयुक्त ब्राह्मण सर्वदेव मयहैं, उनका बचन मिथ्या नहीं
होता वे ब्राह्मण जिसके उपवास व्रत, तथा स्नान, तीर्थ अथवा जप तप
इत्यादि को ॥ ६२ ॥ यह संपूर्ण हो ऐसा कहदेते हैं उन उपवासादिकों के
करनेवालेको पूर्णफल प्राप्त होताहै जिस अन्नादिको कृमि वा मक्षिका (मक्खी)
आदिने दूषित किया हो तथा केश पडा हो तो उसे निकालकर ॥ ६३ ॥
जलसे हाथधोवै और उस अन्नपर किंचिन्मात्र भस्म डालै तौ वह अन्न शुद्ध
होताहै जो ब्राह्मण भोजन करताहुआ हाथसे चरणको स्पर्श करताहै अथवा
भोजन कियेहुये पात्रमें भोजन करता है वह अपना उच्छिष्ट भोजन करता है
खड़ाऊं पहिरेहुए तथा पलँगपरबैठेहुये अथवा खडेहोकरभोजनकरै॥६४॥६५॥
जिस भोजन परश्वान वा चांडाल की दृष्टि पडीहो उसे त्याग दे । जो अन्न

वर्जयेत् । यदन्नंप्रतिषिद्धंस्यादन्नशुद्धिस्तथैव च ॥६६॥ यथा पराशरेणोक्तंतथैवाहं वदामिवः । शृतंद्रोणाढकस्यान्नं काक श्वानोपघातितम् ॥ ६७ ॥ केनेदंशुद्ध्यते चेतिब्रह्मणेभ्योनिवेदयेत् । काकश्वानाबलीढंतु द्रोणान्नं न परित्यजेत् ॥६८॥ वेदवेदांगविद्विप्रैर्धर्मशास्त्रानुपालकैः । प्रस्थाद्द्वात्रिंशतिर्द्रोणः स्मृतोद्विप्रस्थआढकः ॥ ६९ ॥ ततो द्रोणाढकस्यान्नं श्रुतिस्मृति विदोविदुः । काकश्वानावलीढं तु गवाघ्रातं खरेण वा॥७०॥ स्वल्पमन्नं त्यजेद्विप्रःशुद्धिर्द्रोणाढके भवेत् ॥ अन्नस्योद्धृत्य तन्मात्रं यच्चलाला हतंभवेत्॥७१॥सुवर्णोदक मभ्युक्ष्यहुताशेनैवतापयेत्,हुताशननेसंस्पृष्टसुवर्णसलिलेनच

निषिद्ध हैं और उनकी शुद्धि ॥ ६६ ॥ जिसप्रकार पराशर जी ने कही है उसी प्रकार मैं तुम्हारे प्रति कहाताहूं । जो द्रोण और आढ़कभर शृतअन्न (द्रवपकान्न जैसाकि खीर इत्यादि) को काक वा श्वना ने दूषित किया हो तो ॥ ६७ ॥ उस अन्नको ब्राह्मणोंके निवेदन करके उनसे पूछे कि यह अन्न किस प्रकार शुद्धहोगा जो शुद्धिवे बतलावें वही शुद्धि उस अन्न की करै । जो द्रोण भर अन्न को काक वा श्वानने चाटा हो तौ उस अन्न कात्याग नहीं करै किन्तु ब्राह्मण उसकी जैसी शुद्धिबतलावें वैसी शुद्धि करले ॥६८॥ वेद और वेदांगके जाननेवाले और धर्म शास्त्रके अनुकूल आचरण करने वाले ब्राह्मणों ने कहा है कि बत्तीस प्रस्थ[1]का एकद्रोण होताहै,और दो प्रस्थका आढक कहाजाता है॥६९॥द्रोण और आढकभर अन्नको जो काक वा श्वानने चाटाहो अथवा गौ वा गधेनेसूँघा होतौ ॥७०॥ उसमेंसे किञ्चिन्मात्र अन्नको त्याग करदेनेसे शुद्धि होजाती है, ऐसा श्रुति और स्मृतिके जाननेवालोंने कहा है ॥ जितने अन्नमें उसकी राल टपकी हो उतने अन्नको निकाल कर शेषको ॥ ७१ ॥ सुवर्णके जलसे छिड़ककर अग्निसे तप्त करै । क्योंकि-अग्निसे सन्तप्त करनेसे, सुवर्णका जल छिड़कनेसे और ब्राह्मणोंके वेदोच्चारण करनेसे वोह अन्नभक्षण करनेके योग्य होजाता है । घृतादिक स्नेह

१–आठ तोलेकी १ प्रसृति और ६४ प्रसृतिका १ आढक होता हैं ॥

॥ ७२॥ विप्राणां ब्रह्मघोषेण भोज्यं भवति तत्क्षणात् ॥ स्नेहो वा गोरसो वापि तत्रशुद्धिः कथंभवेत् ॥ ७३ ॥ अल्पं परित्यजेत्तत्र स्नेहस्योत्प्लवनेनच ॥ अनलज्वालया शुद्धि गोरसस्य विधीयते ॥ ७४ ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥



अथातोद्रव्यशुद्धिस्तु पराशरवचोयथा । दारवाणान्तु पात्राणांतत्क्षणात् शुद्धिरिष्यते ॥ १ ॥ मार्जनाद्यज्ञपात्राणां पाणिनायज्ञकर्माण ॥ चमसानांस्रुवाणां च शुद्धिरुष्णेनवारिणा ॥ २ ॥ भस्मनाशुद्ध्यते कास्यंताम्रमम्लेन शुद्ध्यति। रजसाशुद्ध्यतेनारी विकलंयानगच्छति॥नदीवेगेनशुद्ध्येत लेपोयदि न दृश्यते ॥ ३ ॥ वापीकूपतडागेषुदूषितेषुकथंचन ॥ उद्धृत्यैवेकुम्भशतंपंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ४ ॥ अष्ट

अथवा गोरस (दुग्धादिक) यदि अशुद्ध होगये हों तौ उनकी शुद्धि किस प्रकार होती है ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ उसमेंसे थोड़ासा निकाल कर स्नेहादिक को उछाल कर शुद्ध करै और गोरसको तप्त करके शुद्ध करले ॥ ७४ ॥

इतिश्री पाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायां षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥



अब इसके अनन्तर द्रव्यों की शुद्धि जिसप्रकार पराशरजीने कही है वर्णन करते हैं। काष्ठ के पात्रों की शुद्धि उनको छीलडालनेसे होजाती है ॥ १ ॥ और यज्ञके कर्म में यज्ञपात्रोंकी शुद्धि हाथसे मार्जन करदेने से होती है। तथा चमस और स्रुवेकी शुद्धि उष्ण जलसे होती है ॥ २ ॥ कांसी के पात्र भस्म से और ताम्र पात्र खटाई से शुद्धहोते हैं। जो स्त्री नीच जाति से संग न करै तौ रजो वर्ता होकर शुद्ध होजाती है। और यदि नदी में किसी अशुद्ध वस्तु का लेपन होयतौ वोह वेग अर्थात्—प्रवाहसे शुद्ध होती है ॥ ३ ॥ वापी कूप तथा तड़ागादिक किसी प्रकार से अशुद्ध होगयेहों तौ उनमेंसे सौघडे जल निकालकरपंचगव्यसे शुद्ध होते हैं ॥ ४ ॥

वर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी । दशवर्षाभवेत्कन्या अत ऊर्ध्वं रजस्वला ॥ ५ ॥ प्राप्ते तु द्वादशेवर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति । मासि मासि रजस्तस्याः पिबन्ति पितरोऽनिशम् ॥ ६ ॥ माताचैव पिताचैव ज्येष्ठोभ्राता तथैव च । त्रयस्तेनरकं यान्ति दृष्ट्वाकन्यां रजस्वलाम् ॥ ७ ॥ यस्तांसमुद्वहेत्कन्यां ब्राह्मणो मदमोहितः । असंभाष्यो ह्यपांक्तेयः सविप्रोवृषली पतिः ॥ ८ ॥ यः करोत्येकरात्रेण वृषलीसेवनं द्विजः । सभैक्ष्य भुग्जपन्नित्यं त्रिभिवर्षैर्विशुद्ध्यति ॥ ९ ॥ अस्तंगतेयदा सूर्ये चाण्डालं पतितंस्त्रियम् । सूतिकांस्पृशतेचैव कथंशुद्धिर्विधीयते ॥ १० ॥ जातवेदं सुवर्णं च सोममार्गं विलोक्य च । ब्राह्मणानुमतश्चैव स्नानं कृत्वाविशुद्ध्यति॥११॥स्पृष्ट्वा रजस्वलान्योन्यंब्राह्मणीब्राह्मणी तथा।तावत्तिष्ठेन्निराहारात्रिरा-

आठ वर्षकी कन्या को गौरी और नौ वर्षकी को रोहिणी कहते हैं और दश वर्षकी कन्या कहलाती है उस के उपरांत रजस्वला होती है ॥ ५ ॥ जो पुरुष बारहवें वर्ष तक कन्यादान नहीं करता तौ उसके पितर प्रत्येक मासमें उस कन्याके रजका पान करते हैं ॥ ६ ॥ रजस्वला कन्याको देखकर माता पिता और बड़ा भ्राता ये तीनों नरकको प्राप्त होते हैं ॥ ७ ॥ जो ब्राह्मण अज्ञानसे उस कन्याको विवाहै उससे संभाषण करना योग्य नहीं वह वृषलीपति कहाता है अतएव पंक्तिसे बाहर करने योग्य है ॥८॥ यदि कोई ब्राह्मण एक रात्रिभी वृपलीका सेवनकरै तौ भिक्षान्नभोजन और गायत्री मंत्रका जप करता हुआ तीनबर्ष में शुद्ध होता है ॥ ९ ॥ (प्र०) जो ब्राह्मण सूर्य अस्त होनेके अनंतर चांडाल पतित (अपने कर्मोंको छोड़कर अन्य जातिका कर्म करनेवाला) वा सूतिका स्त्रीका स्पर्श करै तौ किसप्रकार शुद्ध होता है॥१०॥ (उ०) ब्राह्मणकी आज्ञासे स्नान करके तदनंतर अग्नि सुवर्ण और चन्द्रमाका दर्शन करै यदि उस समय चन्द्रोदय न हुआ हो तौ जिस दिशामें चन्द्रमा हो उस दिशाका दर्शन करै ॥ ११ ॥ जो दो रजस्वला

त्रेणैवशुद्ध्यति ॥१२॥ स्पृष्ट्वारजस्वलान्योन्यंब्राह्मणीक्षत्रिया तथा। अर्द्धकृच्छ्रंचरेत्पूर्वा पादमेकं त्वनन्तरा ॥१३॥ स्पृष्ट्वा रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी वैश्यजा तथा। पादहीनं चरेत्पूर्वा पादमेकमनन्तरा ॥१४॥ स्पृष्ट्वा रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मणी शूद्रजा तथा। कृच्छ्रेण शुद्ध्यते पूर्वा शूद्रा दानेन शुद्ध्यति ॥ १५ ॥ स्नाता रजस्वलायातु चतुर्थेऽहनि शुद्ध्यति। कुर्याद्रजोनिवृत्तौतु दैवपित्र्यादिकर्म च ॥ १६ ॥ रोगेणयद्रजः स्त्रीणामन्वहंतु प्रवर्त्तते। नाशुचिः सा ततस्तेन यस्माद्वैकारिकं मतम् ॥ १७ ॥ साध्वाचारा न तावत् स्याद्रजो यावत्प्रवर्त्तते। रजोनिवृत्तौ गम्या स्त्री गृहकर्मणि चैव हि ॥ १८ ॥ प्रथमेहनि चाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी। तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुद्ध्यति ॥ १९ ॥ आतुरे स्ना-

ब्राह्मणी परस्पर स्पर्श करैं तौ प्रत्येक तीनदिन व्रत करनेसे शुद्ध होती है ॥१२॥ यदि ब्राह्मणी और क्षत्रिया रजस्वला होकर परस्पर (आपस में) एक दूसरीको स्पर्श करलेय तौ ब्राह्मणी अर्द्धकृच्छ्र और क्षत्रिया चतुर्थांश (चौथाई) कृच्छ्र करकै शुद्ध होती है ॥१३॥ यदि ब्राह्मणी और वैश्यकी पुत्री रजस्वला होकर परस्पर एक दूसरीको स्पर्श करलेयँ तौ ब्राह्मणी पादोन (पौन) कृच्छ्र व्रत करकै और वैश्यपुत्री चौथाई कृच्छ्रव्रत करकै शुद्ध होतीहै ॥ १४ ॥ यदि ब्राह्मणी और शूद्रपुत्री रजस्वला होकर परस्पर एक दूसरीको स्पर्श करलेय तौ ब्राह्मणी पूर्ण कृच्छ्रव्रत करकै और शूद्रपुत्री दान करके शुद्ध होतीहै ॥१५॥ रजस्वला चौथे दिन स्नान करकै शुद्ध होतीहै और रजकी निवृत्ति (रुकावट) होनेपर देवकर्म तथा पितृकर्म करै ॥ १६ ॥ रोगके कारण जिस स्त्रीके प्रति दिन रजःस्राव (रजकानिकलना) होय वह स्त्री उस रजसे अपवित्र नहीं होती है क्योंकि-वह रज विकारका है ॥ १७ ॥ जबतक रजकी प्रवृत्ति रहती है तबतक स्त्री सत्कर्ममें अधिकारिणी नहीं होती है, और पतिके सहवास योग्य तथा गृहके कार्य करनेके योग्य भी नहीं होती है ॥ १८ ॥ स्त्री रजस्वला होने पर प्रथमदिन चाण्डाली सदृश, द्वितीयदिन ब्रह्महत्यारीकी सदृश, तृतीय दिन रजकी (धोबिन) की सदृश और चौथेदिन शुद्ध होजातीहै ॥ १९ ॥

न उत्पन्ने दशाकृत्वो ह्यनातुरः। स्नात्वा स्नात्वा स्पृशेदेनं ततः शुद्ध्येत् स आतुरः ॥२०॥ उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टःशुना शूद्रेण वा द्विजः। ऊपोष्य रजनीमेकां पंचगव्येन शुद्ध्यति ॥ २१ ॥ अनुच्छिष्टेन शूद्रेण स्पर्शे स्नानं विधीयते। तेनोच्छिष्टेन संस्पृष्टः प्राजापत्यं समाचरेत् ॥ २२ ॥ भस्मना शुद्ध्यते कांस्यं सुरया यन्न लिप्यते। सुरामात्रेण संस्पृष्टं शुद्ध्यतेऽग्न्युपलेपनैः ॥ २३ ॥ गवा घ्रातानि कांस्यानि श्वकाकोपहतानि च। शुद्ध्यन्ति दशभिः क्षारैः शूद्रोच्छिष्टानि यानि च ॥ २४ ॥ गण्डूषपादशौचं च कृत्वा वै कांस्यभाजने। षण्मासान् भुविनिक्षिप्य उद्धृत्य पुनराहरेत् ॥ २५ ॥ आयसेष्वपसारेण सीसस्याग्नौ विशोधनम्। दन्तमस्थि त-

रोगयुक्त स्त्री रजस्वला होजाय और यदि रुग्ण अवस्था में ही उसके स्नान का दिन आजाय तौ कोई नीरोग व्यक्ति क्रमसे दशबार स्नान कर २ कै उसको स्पर्श करै तब वह रोगयुक्त स्त्री शुद्ध होजाती है ॥ २० ॥ यदि किसी उच्छिष्ट (जूठेमुख) शूद्र अथवा श्वानसे स्पर्श करकै कोई पुरुष किसी ब्राह्मणको स्पर्श करलेय तौ वह ब्राह्मण एकरात्रि उपवास करनेके अनन्तर पञ्चगव्य भक्षण करकै शुद्ध होताहै ॥ २१ ॥ अनुच्छिष्ट शूद्रके स्पर्श होजाने पर ब्राह्मणको स्नान करनेका विधान है और यदि कोई उच्छिष्ट शूद्र स्पर्श करलेय तौ प्राजापत्य ब्रत करै ॥ २२ ॥ जिस कांसीके पात्र में मदिराका स्पर्श न हुआ हो वह भस्मसे (राखसे मांजने पर) शुद्ध होजाता है और यदि मदिराका स्पर्शमात्रभी होगया होय तौ वार २ अग्निडाल कर मांजने से शुद्ध होता है ॥ २३ ॥ गौओं करकै सूंघेहुए, काकके चोंचलगाएहुए और श्वान करके चाटे हुए तथा शूद्र के उच्छिष्ट [जूठे] करेहुए कांसीके पात्र दशबार खटाई आदिक्षार पदार्थसे रगड़कर धोनेसे शुद्ध होते हैं ॥२४॥ यदि किसी कांसीके पात्रमें गण्डूष [कुल्ला] कराहोय या पैर धोये होयँ तौ उस पात्रको छःमास पर्यंत पृथ्वीमें गड़ा रक्खै और तदनन्तर उखाड़ कर व्यवहार में लावै ॥ २५ ॥ लोहपात्रको दूर कर देनेसे और सीसेके

था शृंगं रौप्यं सौवर्णभाजनम् ॥ २६ ॥ मणिपात्राणि शंख-श्चेत्येतान् प्रक्षालयेज्जलैः । पाषाणे तु पुनर्घृष्टिरेषा शुद्धि-रुदाहृता ॥ २७ ॥ मृण्मये दहनाच्छुद्धिर्धान्यानां मार्जनाद-पि ॥ २८ ॥ अद्भिस्तु प्रोक्षणं शौचं बहूनां धान्यवाससा म्॥प्रक्षालनेन स्वल्पानामद्भिः शौचंविधीयते॥२९॥वेणुवल्क लचीराणांक्षौमकार्पासवाससाम्।और्णनेत्रपटानांच प्रोक्षणा च्छुद्धिरिष्यते।३०।मुंजोपस्करशूर्पाणांशणस्यफलचर्मणाम्।तृण काष्ठादिरज्जूनामुदकाभ्युक्षणंमतम्।३१। तूलिकाद्युपधानानि रक्तवस्त्रादिकानि च। शोषयित्वार्कतापेनप्रोक्षणाच्छुद्धतामि-युः ॥ ३२ ॥ मार्जारमक्षिकाकीटपतंगकृमिदर्दुराः । मेध्या-मेध्यं स्पृशन्त्येव नोच्छिष्टान्मनुरब्रवीत् ॥ ३३ ॥ महींस्पृष्ट्-

पात्रको अग्नि में तपाने से तथा दांत अस्थि, सींग, चांदी, सुवर्ण, मणि और पत्थरके पात्र एवं शंखके जलसे धोलेने पर शुद्धि होजाती है और पाषाण के पात्रको जलसे धोनेके अनन्तर मांजभी लेना चाहिये, ऐसा करने पर ही शास्त्रमें उसकी शुद्धिकही है ॥२६॥२७॥ मृत्तिकाके पात्रकी जलानेसे और धान्योंकी मलकर धोनेसे शुद्धि होतीहै (अथवा परित्याग करदेना चाहिये) ॥ २८ ॥ बहुतसे धान्य और वस्त्रोंकी जल छिडकलेने मात्रसे शुद्धि होतीहै और थोडे धान्य तथा वस्त्र होयँ तो उनको धोनेसे शुद्धि होती है ॥२९॥ बाँस, वल्कल (भोजपत्रादि), फटे वस्त्र, रेशमीवस्त्र, सूतीवस्त्र ऊनीवस्त्र, और नेत्रपट ' सनके वस्त्र ,की प्रक्षालन करने से शुद्धि होती है ॥ ३० ॥ मूँज, उपस्कर (शिल—बटनी—ऊखली आदि), शूर्प (छाज) सन,फल, चर्म, तृण, काठ, रस्सी इनकी जल छिडकनेसे शुद्धि होती है ॥ ३१ ॥ तोसक तकिया आदि शय्याकी सामग्री लालवस्त्र आदि धूप में सुखाकर जल छिडकनेसे शुद्ध होजाते हैं ॥ ३२ ॥ बिडाल मक्खिका कीट, पतंग, कीडे और मेंडक, यह सब सदा शुद्ध अशुद्ध वस्तुओं का स्पर्श करते हैं, इस कारण इनके स्पर्शसे कोई वस्तु अपवित्र नहीं होती है, ऐसा मनुजीका मतहै ॥ ३३ ॥ जो जल पृथ्वीको स्पर्श करके अन्यत्र

वा गतं तोयं यश्चाप्यन्योन्यविप्रुषः । भुक्तोच्छिष्टं तथा स्नेहं नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥३४॥ ताम्बूलेक्षुफले चैव भुक्त स्नेहानुलेपने । मधुपर्के च सोमे च नोच्छिष्टं मनुरब्रवीत् ॥ ३५ रथ्याकर्दमतोयानि नावः पन्थास्तृणानि च । मारुतार्केणशुद्ध्यन्ति पक्केष्टकचितानि च ॥ ३६ ॥ अदुष्टाः सन्तता धारा वातोद्धूताश्च रेणवः । स्त्रियोवृद्धाश्च बालाश्च न दुष्यन्ति कदाचन ॥ ३७ ॥ क्षुते निष्ठीवने चैव दन्तोच्छिष्टे तथानृते । पतितानां च संभाषे दक्षिणं श्रवणं स्पृशेत् ॥३८॥ अग्निरापश्च वेदाश्च सोमसूर्यानिलास्तथा । एतेसर्वेऽपि विप्राणां श्रोत्रे तिष्ठन्ति दक्षिणे ॥ ३९॥ प्रभासादीनि तीर्थानि गंगाद्याः सरितस्तथा ! विप्रस्य दक्षिणे कर्णे सान्निध्यं मनुरब्रवीत् ॥ ४० ॥ देशभंगे प्रवासे वा व्याधिषु व्य-

जलमें मिल गयाहै और जोएकसे उछटकर अन्यकेऊपर गईहुई छींटें हैं यदि भुक्तोच्छिष्ट(भोजन करकैजूठा वचाहुआ) होयतौभी अपवित्र नहीं होता है इसी प्रकार भुक्तोच्छिष्ट तेलभी अशुद्ध नहीं होता है ऐसामनुजी कामत है ॥३४॥ ताम्बूल, इक्षुफल [गन्ना], जिसमेंसे कुछ कार्यमें लायागया है ऐसा तैल और अनुलेपन (चन्दनादि) मधुपर्क तथा सोमरसमें उच्छिष्टता नहीं होती है ऐसा मनुजीका कथन है ॥ ३५ ॥ रथ्या [गली—मार्गआदि] की कींच और जल, नाव, मार्ग और तृण तथा और पक्की ईंटोंकी चिनाई यह सब वायु और सूर्यके संयोगसे शुद्ध होते हैं ॥ ३६ ॥ चारोंओर फैली हुई जलकी निर्मल धारा और वायुसे आकाशमें उड़ाई हुई धूलि, वृद्ध स्त्री और वालक यह कदापि दूषित (अपवित्र) नहीं होते हैं॥ ३७ ॥ छींकलैने पर, थूकनेपर, दांतोंसे किसीअंगके उच्छिष्टहोजानेपर, असत्य बोलने पर और पतितोंके साथ भाषण करनेपर दाहिनकर्णका स्पर्श करै, क्योंकि अग्नि, जल, वेद, चन्द्रमा, सूर्य, वायु यह सब ब्राह्मणोंके दाहिने कर्ण में स्थित रहते हैं ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ प्रभास आदि तीर्थ, और गंगा आदि नादियें ब्राह्मणके दक्षिण कर्णमें निबास करती हैं, ऐसा मनुजीका कथन है ॥ ४० ॥ देशका नाश होनेके समय, परदेशमें रोगयुक्त होनेपर और

सनेष्वपि । रक्षेदेव स्वदेहादि पश्चाद्धर्मं समाचरेत् ॥४१॥ येन केन च धर्मेण मृदुना दारुणेन वा । उद्धरेद्दीनमात्मानं समर्थो धर्ममाचरेत् ॥४२॥ आपत्काले तु सम्प्राप्ते शौचाचारं नचिन्तयेत्।आत्मानमुद्धरेत्पश्चात्स्वस्थोधर्मंसमाचरेत्॥४३॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥



गवां बन्धनयोक्त्रेषु भवेन्मृत्युरकामतः । अकामात्कृतपापस्य प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ॥ १ ॥ वेदवेदांगविदुषां धर्मशास्त्रं विजानताम् । स्वकर्मरतविप्राणां स्वकं पापं निवेदयेत् ॥ २ ॥ अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि उपस्थानस्य लक्षणम् । उपस्थितो हि न्यायेन व्रतादेशनमर्हति ॥ ३ ॥ सद्यो निःशंसये

आपत्तियोंके समय प्रथम सब प्रकार से अपने शरीर की रक्षा करै तदनन्तर धर्माचरण करै ॥ ४१ ॥ अपने ऊपर आपत्ति आनेपर कोमल वा कठोर जिस किसी उपायसे भी होसकै प्रथम अपने दीन (आपत्ति ग्रस्त) आत्मा का उद्धार करै, तदनन्तर समर्थ होकर धर्माचरण करै ॥ ४२ ॥ आपत्तिकाल के प्राप्त होनेपर शौचाचार का विचार न करै, प्रथम अपना उद्धार करै तदनन्तर स्वस्थ होकर धर्माचरण करै ॥ ४३ ॥

इतिश्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥



यदि कोई गौ (बैल-या-गैया) बाँधनेके खूँटेमें बँधी हुई (किसीप्रकार की अज्ञात पीडाको पाकर) अकामतः मरणको प्राप्त होजाय तौ तिस अकामकृत पापका प्रायश्चित्त किसप्रकार होना उचित है ? ॥ १ ॥ वेद वेदांग के जानने वाले, धर्मशास्त्र के पारदर्शी, सदायाग यज्ञ औ याजन (यज्ञ कराना) आदि अपने कर्ममें तत्पर ब्राह्मणोंसे अपना पाप कहै ॥ २ ॥ यहांसे आगै, वह पापी पुरुष धर्मज्ञ ब्राह्मण के पास किसप्रकार जाय सो कहते हैं—न्यायमार्गसे अपने पास आये हुए पापी को ब्राह्मण व्रत की आज्ञा दैं ॥ ३ ॥ यदि पाप का निश्चय होजाय तौ धर्मज्ञ ब्राह्मणों

पापे न भुंजीतानुपस्थितः । भुंजानो वर्द्धयेत्पापं पर्षद्यत्र न विद्यते ॥ ४ ॥ शंसये तु न भोक्तव्यं यावत्कार्यविनिश्चयः । प्रमादस्तु न कर्त्तव्यो यथैवाशंसयस्तथा ॥ ५ ॥ कृत्वा पापं न गूहेत गुह्यमानं विवर्द्धते । स्वल्पं वाथ प्रभूतं वा धर्मविद्भ्योनिवेदयेत् ॥ ६ ॥ ते हि पापकृतां वैद्या हन्तारश्चैव पाप्मनाम् । व्याधितस्य यथा वैद्या बुद्धिमन्तो रुजापहाः॥७॥ प्रायश्चित्ते समुत्पन्ने ह्रीमान् सत्यपराणः। मृदुरार्जवसम्पन्नः शुद्धिं गच्छेत मानवः ॥ ८ ॥ सचैलं वाग्यतः स्नात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः । क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा ततः पर्षदमाव्रजेत् ॥ ९ ॥ उपस्थाय ततः शीघ्रमार्त्तिमान् धरणीं व्रजेत् । गात्रैश्च शिरसा चैव न च किंचिदुदाहरेत् ॥ १० ॥ सावित्र्याश्चैव गायत्र्याः सन्ध्योपास्त्यग्निकार्ययोः । अज्ञानात्कृषि-

के अर्थ उस पाप को विना निवेदन करे भोजन न करै, यदि परिषत् (धर्मज्ञ ब्राह्मणोंकी मण्डली) के समीपविनाजाय भोजन करलेय तौ पाप की बृद्धि होती है ॥४॥ यदि पापमें संदेहहोय तौ जबतक निश्चय न होजाय तबतकभोजन नकरै, और जवतक निश्चय न होय तबतक असावधानभी नही रहना चाहिये ॥५॥ कियाहुआ पाप थोड़ा हो चाहें अधिक हो उसको कदापि छिपावै नहीं किन्तु धर्मज्ञ ब्राह्मणों से निवेदन करदेय, क्योंकि—छिपानेसे पापकी बृद्धि होती है ॥ ६ ॥ जिस प्रकार बुद्धिमान् वैद्य रोगीपुरुषके रोगको नष्ट करदेता है तिसी प्रकार योग्यपुरुषके अर्थ अपना पाप निवेदन करनेपर वह उस पापको नष्ट करदेता है ॥ ७ ॥ (परिषद् की आज्ञाके अनुसार) पाप करनेवालेका उचित प्रायश्चित्तहोजानेपर (पापकी दारुण) लज्जासे युक्त सत्यव्रत परायण, सरलस्वभाव पुरुष शुद्धि को प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ क्षत्रिय हो चाहें वैश्य हो, पापका संसर्ग होतेही मौन धारण करकै वस्त्रौंसहित स्नान करै और तिस गीले वस्त्रको पहिनेहुएही सावधानतासे परिषद्के पासजाय ॥ ९ ॥ जहांतक होसकै शीघ्रताके साथ परिषद्के समीप जाकर विनयपूर्वक शिर और शरीरसे पृथ्वी में प्राप्त होय अर्थात् साष्टांग प्रणाम करै और कुछ कहै नहीं ॥ १० ॥ जो वेद और गायत्री को नहीं जानते

कर्त्तारो ब्राह्मणा नामधारकाः ॥ ११ ॥ अव्रतानाममंत्राणां जातिमात्रोपजीविनाम् । सहस्रशः समेतानां परिषत्वं न विद्यते ॥ १२ ॥ यद्वन्ति तमोमूढाः मूर्खाधर्ममतद्विदः । तत्पापं शतधा भूत्वा तद्वक्तुरधिगच्छति ॥ १३ ॥ अज्ञात्वा धर्मशास्त्राणि प्रायश्चित्तं ददाति यः । प्रायश्चित्ती भवेत्पूतः किल्विषं परिषद्व्रजेत् ॥ १४ ॥ चत्वारो वा त्रयो वापि यं ब्रूयुर्वेदपारगाः । स धर्म इति विज्ञेयो नेतरैस्तु सहस्रशः ॥ १५ ॥ प्रमाणमार्गं मार्गन्तो ये धर्मं प्रवदन्ति वै तेषामुद्विजते पापं सद्भूतगुणवादिनाम् ॥ १६ ॥ यथाश्मनि स्थितं तोयं मारुतार्केण शुध्यति । एवं परिषदादेशान्नाशयेदेव दुष्कृतम् ॥ १७॥ नैव गच्छति कर्त्तारं नैव गच्छति परिषदम् । मारुतार्कादिसंयोगात्पापं नश्यति तोयवत् ॥ १८ ॥

हैं, सन्ध्योपासना और अग्निमें आहुतिदान नहीं करते हैं । सदा केवल खेती का कार्य करनेमेंही तत्पर रहते हैं वह नाममात्रके ब्राह्मण हैं॥ ११॥ व्रत मन्त्रसे रहित और जाति के नाममात्रसे जीविका करनेवाले जो ब्राह्मण हैं वह सहस्रों इकट्ठे हों तौ भी परिषद् नहीं कहासक्तीहै॥ १२॥ अज्ञानरूप अंधकारसे मूढ़ धर्मशास्त्रके न जाननेवाले मूर्खब्राह्मण प्रायश्चित्तकी व्यवस्थादें तौ पापी पापसे छूटजाता है परंतु वह पाप सौगुना होकर व्यवस्था दैनेवालोंके शरीरमें प्रवेश कराते हैं ॥१३ ॥ जो धर्मशास्त्रको न जानकर प्रायश्चित्तकी व्यवस्था देते हैं, पापी पुरुष तौ उस व्यवस्था के अनुसार शुद्ध होता है परन्तु वह पाप व्यवथा दैने वाली उस परिषद् के शरीरमें प्रवेशकरता है ॥ १४ ॥ चार अथवा तीन वेदवेत्ता ब्राह्मण जो व्यवस्था देते हैं वहही धर्म है अन्य सहस्रों पुरुषोंका वाक्यभी धर्म नहीं होसक्ता ॥ १५ ॥ प्रमाणके मार्गको ढूँढते हुए जो धर्म शास्त्र की व्यवस्था देते हैं, उनसे पाप भय मानता है और वहही वास्तविक धर्मके कहनेवाले हैं ॥ १६ ॥ जिस प्रकार शिलापैस्थित जल वायु और सूर्यके द्वारा सूखजाताहै तिसीप्रकार परिषद्की आज्ञा [व्यवस्था] से पापोंका समूह नाशको प्राप्तहोता है॥ १७। वायु और सूर्यके संयोगसे सूखे हुये जलकी समान पाप नष्ट होजाते हैं और न वह पापकर्त्ताके

चत्वारो वा त्रयो वापि वेदवन्तोऽग्निहोत्रिणः। ब्राह्मणानां समर्था ये परिषत्सा विधीयते ॥१९॥ अनाहिताग्नयो येऽन्ये वेदवेदाङ्गपारगाः। पंच त्रयो वा धर्मज्ञाः परिषत् सा प्रकीर्त्तिता ॥ २० ॥ मुनीनामात्मविद्यानां द्विजानांयज्ञयाजिनाम्। वेदव्रतेषु स्नातानामेकोऽपि परिषद्भवेत् ॥ २१ ॥ पंचपूर्वं मया प्रोक्तास्तेषां चासंभवे त्रयः। स्ववृत्तिपरितुष्टा ये परिषत्सा प्रकीर्त्तिता ॥ २२ ॥ अत ऊर्ध्वं तु ये विप्राः केवलं नामधारकाः। परिषत्त्वं न तेष्वस्ति सहस्रगुणितेष्वपि ॥ २३ ॥ यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः। ब्राह्मणास्त्वनधीयानस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥ २४ ॥ ग्रामस्थानं यथा शून्यं यथा कूपस्तु निर्जलः। यथा हुतमनग्नौ च अमन्त्रो ब्राह्मणस्तथा ॥ २५॥ यथा षंडोऽफलः स्त्रीषु यथा गौरुषराफला। यथा

शरीर में रहते हैं न परिषद्के शरीर में प्रवेशकरतेहैं॥१८॥वेदज्ञ, अग्निहोत्र करनेवाले, ब्राह्मणोंमें समर्थ पांच वा तीन पुरुषोंकी परिषद् कहाती है॥ १९ ॥ वेद वेदांगके पारगामी जो धर्मज्ञ ब्राह्मण आहिताग्नि (अग्निहोत्र करनेवाले) नहीं हैं, ऐसे पांच वा तीन पुरुषोंके समूहको परिषद् कहते हैं ॥२०॥ ध्यान धारणादि के द्वारा आत्मतत्वको जाननेवाले मुनि, यज्ञ करनेवाले और देवताओंके व्रत करनेवाले तथा स्नातक [वेदाध्ययनके अनन्तर समावर्त्तका अंगरूप स्नान करनेवाला] इनमेंसे एक पुरुषभी परिषद् होसक्ता है ॥२१॥ ऊपर कहचुके हैं कि--पांच ब्राह्मणोंकी परिषद् होतीहै, परन्तु वेदज्ञ पांच ब्राह्मण न मिलैं तौ शास्त्रोक्त निजवृत्तिमें सन्तुष्ट तीन ब्राह्मणोंकी भी परिषद् होसक्ती है ॥ २२ ॥ इनके सिवाय जो केवल नाममात्र ब्राह्मण हैं (वेदज्ञ नहीं हैं) वह सहस्रों हों तौभी परिषद् नहीं होसक्ती ॥२३॥ जैसा काठका हस्ती, जैसा चर्म रचित मृग, वेदको न जाननेवाला ब्राह्मण भी तैसाही है, यह तीनों केवल नाममात्र धारण करनेवाले हैं ॥ २४ ॥ जैसा शून्य ग्राम, जैसा निर्जल कूप, और जैसा अग्निरहित भस्मके ढेरमें हवन करना निष्फल है, तैसेही वेदमन्त्रोंको न जाननेवाला ब्राह्मण भी निष्फलहै ॥ २५ ॥

चाज्ञे फलं दानं तथा विप्रोऽनृचोऽफलः॥२६॥ चित्रं कर्म यथा नेकैरंगैरुन्मील्यते शनैः। ब्राह्मण्यमपि तद्वत्स्यात्संस्कारैर्विधिपूर्वकैः॥ २७॥ प्रायश्चित्तं प्रयच्छन्ति ये द्विजा नामधारकाः। ते द्विजाः पापकर्माणःसमेता नरकं ययुः॥ २८॥ ये पठन्ति द्विजा वेदं पञ्चयज्ञरताश्च ये। त्रैलोक्यं धारयन्त्येते पञ्चेन्द्रियरताश्रयाः॥ २६॥ संप्रणीतः श्मशानेषु दीप्तोऽग्निः सर्वभक्षकः। तथैव ज्ञानवान् विप्रः सर्वभक्षोऽपि दैवतम्॥ ३०॥ अमेध्यानि च सर्वाणि प्रक्षिपन्त्युदके यथा। तथैव किल्विषं सर्वं प्रक्षेप्तव्यं द्विजेऽमले॥ ३१॥ गायत्री रहितो विप्रः शूद्रादप्यशुचिर्भवेत्। गायत्री ब्रह्मतत्वज्ञाःसंपूज्यन्ते द्विजोत्तमाः॥ ३२॥ दुःशीलोऽपि द्विजःपूज्यो न शूद्रो विजिते-

जैसे नपुंसकका स्त्री संभोग निष्फल होता है, जैसे ऊषरभूमि निष्फल है और जैसे मूर्खको दानदेना निष्फल है तैसेही वेदमंत्रोंको न जाननेवाला ब्राह्मण निषद्ध है॥ २६॥ जिसप्रकार चित्रकारीका काम बहुतसे अंग-प्रत्यंगोंके गठनसे क्रम करके उन्मीलित होता है तिसीप्रकार विधिपूर्वक करेहुए गर्भाधानादि संस्कारोंसे ब्राह्मणत्व प्रकाशित होता है॥ २७॥ जो नाममात्रके ब्राह्मण प्रायश्चित्तकी व्यवस्था देते हैं वह पापकर्मी हैं और सब नरकगतिको पाते हैं॥ २८॥ जो ब्राह्मण वेद पढ़ते हैं और जो पञ्चयज्ञ करनेमें तत्पर रहते हैं वहही त्रिलोकीको धारण करते हैं और पञ्चेन्द्रिय परायण मनुष्योंके आश्रय हैं॥ २९॥ जिस प्रकार मंत्रोंसे संस्कार किया हुआ अग्नि श्मशानमें सर्वभोक्ता है तिसी प्रकार ब्रह्मज्ञानके द्वारा संस्कार-को प्राप्तहुआ ब्राह्मण सर्वभुक् और देवरूप होता है॥ ३०॥ जिसप्रकार संपूर्ण अपवित्र पदार्थ जलमें डालेजाते हैं तिसीप्रकार संपूर्ण पापोंको निर्मल ब्राह्मणमें डालै॥३१॥ गायत्री रहित ब्राह्मण शूद्रकी अपेक्षाभी अपवित्र है, गायत्री और ब्रह्मतत्वज्ञ ब्राह्मण श्रेष्ठ और पूजनीय है॥ ३२॥ ब्राह्मण दुःशील होय तौ भी उसकाही पूजन करै, शूद्र जितेंद्रिय होय तौ भी उसका पूजन न करै, कौन पुरुष दूषित अंग गौको त्यागकर सुशीला गर्दभी [गधैया]

न्द्रियः। कः परित्यज्य दुष्टांगां दुहेच्छीलवतीं खरीम् ॥ ३३ ॥ धर्मशास्त्ररथारूढा वेदखड्गधरा द्विजाः। क्रीडार्थमपि यद्ब्रूयुः स धर्मः परमः स्मृतः॥३४॥चातुर्वैद्योऽविकल्पी च अङ्गविद्धर्मपाठकः। त्रयश्चाश्रमिणो मुख्याःपरिषदेषा दशावरा ॥३५॥ राज्ञांचानुमते चैव प्रायश्चित्तं द्विजो वदेत्। स्वयमेव न वक्तव्या प्रायश्चित्तस्य निष्कृतिः ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणांश्च व्यतिक्रम्य राजा यत्कर्त्तुमिच्छति। तत्पापं शतधा भूत्वा राजानमुपगच्छति ॥ ३७ ॥ प्रायश्चित्तं सदा दद्याद्देवतायतनाग्रतः। आत्मानं पावयेत्पश्चाज्जपन् वै वेदमातरम् ॥ ३८ ॥ सशिखं वपनं कृत्वा त्रिसंध्यमगवाहनम्। गवां गोष्ठे वसेद्रात्रौ दिवा ताः समनुव्रजेत् ॥ ३९ ॥ उष्णो वर्षति शीते वा मारुते वाति वा भृशम्। न कुर्वीतात्मनस्त्राणं गोरकृत्वा तु श-

को दुहैगा ? अर्थात् कोई नहीं ॥ ३३ ॥ द्विज धर्मशास्त्ररूप रथपै चढ़कर और वेदरूपी खड्ग को धारण करकै हास्यसेभी जो कुछ कहदैं उसको परम धर्म जानै ॥ ३४ ॥ चारों वेदोंका वेत्ता, निश्चित ज्ञान सम्पन्न वेदके अंगोंका पारदर्शी और धर्मशास्त्र पढानेवाला इकलाही श्रेष्ठ परिषद् होसक्ता है, प्रधान आश्रमी दश हों तौभी मध्यम परिषद् होती है ॥३५॥ राजाकी आज्ञाके अनुसार ब्राह्मण व्यवस्था देय, अपने आप कदापि व्यवस्था न देय ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणकी सम्मति लिये विना राजा कोई व्यवस्था देदेय तौ उस पापीका पाप सौगुना वढकर राजाके शरीरमें प्रवेश करता है ॥ ३७ ॥ देवमंदिरके सन्मुख वैठकर ब्राह्मण व्यवस्था देय,तदनन्दर वेदमाता गायत्रीका जप करकै अपनेको शुद्ध करै ॥ ३८ ॥ प्रायश्चित्त करनेके समय प्रथम शिखा सहित शिरका मुण्डन करावै, त्रिकाल में स्नान करकै दिन में गौके पीछे २ फिरै और रात्रि के समय गोशाला में शयन करै ॥ ३९ ॥ गरम वायु चलै, चाहैं शीतल वायु चलै, चाहें आँधी चलती होय और चाहै वर्षा होती होय परन्तु अपनी रक्षाकी ओर ध्यान

क्षितः॥ ४० ॥ आत्मनो यदि वान्येषां गृहे क्षेत्रेऽथवा खले । भक्षयन्तीं न कथयेत्पिबन्तं चैव वत्सकम् ॥ ४१ ॥ पिबन्तीषु पिबेत्तोयं संविशन्तीषु संविशेत् । पतितां पंकमग्नां वा सर्वं प्राणैःसमुद्धरेत् ॥ ४२ ॥ ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा यस्तु प्राणान्परित्यजेत् । मुच्यते ब्रह्महत्याद्यैर्गोप्ता गोर्ब्राह्मणस्य च ॥ ४३॥ गोवधस्यानुरूपेण प्राजापत्यंविनिर्दिशेत् । प्राजापत्यन्तु यत् कृच्छ्रं विभजेत्तच्चतुर्विधम् ॥४४॥ एकाऽहमेकभक्ताशी एकाहं नक्तभोजनः । अयाचिताश्येकमहरेकाहंमारुताशनः ॥४५॥ दिनद्वयं चैकभक्तो द्विदिनं नक्तभोजनः । दिनद्वयमयाची स्याद् द्विदिनं मारुताशनः ॥ ४६ ॥ त्रिदिनं चैकभक्ताशी त्रिदिनं नक्तभोजनः । दिनत्रयमयाचीस्यात्त्रिदिनं मारुताशनः

न देकर शक्तिके अनुसार गौ की रक्षा करै ॥४०॥ अपने या अन्यके घर में, अथवा खेतमें अथवा खल (पैर) में यदि गौ धान्यादि कुछ खाती होय तौ कुछ बोलै नहीं, बछडा गौ का दुग्ध पीता होय तौ भी कुछ न कहै ॥४१॥ गौके जलपान करलैने पर जलपानकरै,गौ के शयन करने पर शयनकरै, गौके गिरपडनेपर अथवा पंक[कीच]में अड़जानेपरसवप्रकारसेशक्तिकरकै उस को उठावै॥४२॥गौ और ब्राह्मणकेलिये जोपुरुष प्राणत्यागकरताहै,प्राणोंकोलगाकर भी गौ और ब्राह्मणोंकी रक्षा करनेवाला वह पुरुष ब्रह्महत्यादि सब प्रकार के पापोंसे छूटजाता है ॥ ४३ ॥ गोबधके प्रायश्चित्तके निमित्त एक प्राजापत्य व्रत करनेकी व्यवस्था देय, प्राजापत्य नामक कृच्छ्र व्रतको चार भागमें विभक्त करै ॥ ४४ ॥ एक दिन एक भुक्त [एक पाक भोजन करै], एक दिन रात्रि में भोजन करै, अयाचित [बिना मागाहुआ] पदार्थ भोजन करै और एक दिन वायुसेवन करकै रहै ॥ ४५ ॥ दूसरे प्रकारके प्राजापत्यका यह नियम है कि—दो दिन एक भुक्त रहै, दो दिन रात्रिमें भोजन करै, दो दिन अयाचित वस्तु भोजन करै और दो दिन वायु सेवन करकै रहै ॥ ४६ ॥ तीसरे प्रकारके प्राजापत्यका यह नियम है कि--तीन दिन एक भुक्त रहै, तीन दिन रात्रिमें भोजन करै, तीन दिन अयाचितपदार्थका भोजन करै और तीन दिन वायु सेवन करकै रहै ॥ ४७ ॥ चौथे

॥४७॥ चतुरहस्त्वेकभोजी चतुरहं नक्तभोजनः । चतुर्दिनम-याचीस्याच्चतुरहं मारुताशनः ॥४८॥ प्रायश्चित्ते ततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् । विप्राय दक्षिणां दद्यात्पवित्राणि ज-पेद्द्विजः ॥ ४९ ॥ ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु गोघ्नःशुद्धो न संशयः ॥ ५० ॥

इतिश्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥



गावां संरक्षणार्थाय न दुष्येद्रोधबंधयोः । तद्वधंतुनतंविद्या त्कामात् कामकृतं तथा ॥१॥ अंगुष्ठमात्रः स्थूलोवा बाहुमात्रः प्रमाणतः । आर्द्रस्तु सपलाशश्च दण्ड इत्यभिधीयते ॥ २ ॥ दंडादूर्ध्वंयदन्येन प्रहाराद्यदिपातयेत् । प्रायश्चित्तं तदाप्रो-

प्रकारका प्राजापत्य यह है कि--चार दिन एकभुक्त रहै, चार दिन रात्रिमें भोजन करै, चार दिन अयाचित वस्तु भोजन करै और चार दिन वायुसेवन करकै रहै ॥ ४८ ॥ ऐसे चारों प्रकारके प्राजापत्य व्रतका अनुष्ठान पूर्ण होने पर ब्राह्मणोको भोजन करावै और दक्षिणा देय, ब्राह्मण पवित्र मंत्रोंका जप करैं ॥ ४९ ॥ ब्राह्मणोंको भोजन कराकै गोबध करनेवाला शुद्ध होजायगा इस में कोई संशय नहीं है ॥ ५० ॥

इति पाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायामष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥



रक्षा करनेकी इच्छासे यदि गौको बांधाजाय अथवा रोककर रक्खाजाय तौ दोष नहीं है, उस अवस्था में गौका मरण होजाय तौभी वह कामकृत वा अकामकृत गोबध नहीं कहाजासक्ता ॥१॥ अंगूठेकी समान स्थूल (मोटा) एक हाथका लम्बा, गीला और पत्तों से युक्त वृक्षकी शाखा दण्ड कहाती है ॥ २ ॥ इस कहेहुए दण्डकी अपेक्षा बड़े दण्डेसे जो पुरुष गौको ताड़ना करै तौ उसको प्रायश्चित्त करना चाहिये और यदि उस प्रहार से गौका

क्तंद्विगुणं गोवधे चरेत् ॥ ३ ॥ रोधबंधनयोक्त्राणि घातश्चेति चतुर्विधम्। एकपादं चरेद्रोधे द्वौपादौ बंधनेचरेत् ॥ ४ ॥ योक्त्रेषुतुत्रिपादं स्याच्चरेत् सर्वंनिपातने। गोघाटेवागृहे वापिदुर्गेष्वप्यसमस्थले ॥ ५ ॥ नदीष्वथसमुद्रेषुखातेष्यथदरी मुखे। दग्धदेशेऽस्थितागावः स्तंभनाद्रोध उच्यते ॥ ६ ॥ योक्त्रदामकडोरैश्चकंठाभरणभूषणैः। गृहेचापि वनेवापिबद्धः स्याद्गौर्मृतोयादि ॥ ७ ॥ तदेवबंधनं विद्यात्कामाकामकृतं च-यत्। हलेवाशकटेपंक्तौ पृष्ठेवापीडितोनरैः ॥ ८ ॥ गोपतिर्मृत्युमाप्नोतियोक्त्रोभवतितद्वधः। मत्तः प्रमत्तउन्मत्तश्चेतनोवाऽप्यचेतनः ॥ ९ ॥ कामाकामकृतोक्रोधोदंडैर्हन्यादथोपलैः। प्रहृतावामृतावापितद्धिहेतुर्निपातने ॥ १० ॥ मूर्छितः पतितोवापिदंडेनाभिहतः स तु। उत्थितस्तु यदागच्छेत्पंच सप्तदशाथवा ॥ ११ ॥ ग्रासंवायादि गृह्णीयात्तोयं वापिपि-

मरण होजाय तौ दुगना प्रायश्चित्त करै ॥ ३ ॥ रोध--बन्धन--जोत--और घात इन चारप्रकारसे गौको पीड़ा देने पर प्रायश्चित्त करै। गौको रोकने पर एक पाद, बाँधने पर दो पाद, जोतने में तीन पाद और प्रहार से प्राणबध करने में संपूर्ण चतुष्पाद प्रायश्चित्त करै, गौओंको चरानेके स्थानमें, गृहमें, घेरमें, दुर्गम स्थानमें, नदीमें, समुद्रमें गड्हेमें, गुहामुखमें, और जलते हुए स्थानमें स्थित गौ रोकनेसे मरण होजाय तौ उसको रोध कहते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ रस्सी, जोतकी रस्सी और घण्टा आदि कण्ठके भूषणसे बंधेहुए गौ (बैल या गैया) का घरमें अथवा बनमें मरण होजाय तौ उसको बन्धन कहते हैं, यह दो प्रकारका होता है एक कामकृत और दूसरा अकामकृत ॥ ७ ॥ यदि मत्त, प्रमत्त, उन्मत्त, चेतन वा अचेतन होकर कामकृत (इच्छासे) या अकामकृत (अनिच्छासे) क्रोधकरकै दंड या पत्थरके द्वारा गौके ऊपर प्रहार करै, उससे अत्यन्त पीड़ित होय या गौ मरणको प्राप्त होजाय तौ उसको निपातन वा प्रहार के द्वारा गोबध कहते हैं। दण्डके प्रहार से पीड़ित होकर यदि गौ मूर्छित होजाय या गिरपड़ै और

वेद्यादि। पूर्वव्याध्युपसृष्टश्चेत्प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ १२ ॥ पिंडस्थेपादमेकंतुद्वौ पादौगर्भसंमिते। पादोनं व्रतमुद्दिष्टंहत्वागर्भमचेतनम् ॥ १३ ॥ पादेंगरोमवपनं द्विपादेश्मश्रुणोपि च। त्रिपादे तु शिखावर्जं सशिखंतु निपातने ॥ १४ ॥ पादेवस्त्रयुगं चैव द्विपादेकांस्यभाजनम्।त्रिपादेगोवृषंदद्या च्चतुर्थेगोद्वयंस्मृतम् ॥१५॥ निष्पन्नसर्वगात्रस्तु दृश्यतेवासचेतनः। अंगप्रत्यंगसंपूर्णो गुणंगोव्रतंचरेत् ॥ १६ ॥ पाषाणोनैवदंडेन गावोयेनाभिघातिताः। शृंगभंगेचरेत्पादं द्वौपादौ नेत्रघातने ॥ १७॥ लांगूलेपादकृच्छ्रंतु द्वौपादावास्थिभंजने। त्रिपादंचैवकर्णेतु चरेत्सर्वनिपातने ॥ १८ ॥ शृंगभंगेस्थि भंगे च कटिभंगेतथैव च। यदिजीवतिषण्मासान्प्रायश्चित्तं

फिर उठकर चलने लगै अर्थात्--गौ यदि प्रहारकी पीड़ासे मुक्त होजाय तौ प्रायश्चित्त नहीं होता है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ पिण्डरूप गौका गर्भ नष्ट करनेपर एक पाद, गर्भमें स्थित बछड़ेके हाथ पैर आदि अंग उत्पन्न होगएहों उसको नष्ट करने पर दोपाद, और चेतनताहीन पूर्णशरीरगर्भके वत्सकोनष्ट करने पर तीनपाद व्रतका अनुष्ठान करै ॥ १३ ॥ एकपाद व्रत करनेमें शरीरकेरोम दूरकरै, दो पाद प्रायश्चित्त में श्मश्रु (दाढ़ीमूछ) पर्यन्त मुण्डन करावै पादोन (पौन) प्रायश्चित्तमें शिखाको छोड़कर समस्त मुण्डन करावै और निपातन अर्थात् चतुष्पाद पूर्ण प्रायश्चित्त करना होय तौ शिखासहित संपूर्ण मुण्डन करावै ॥ १४ ॥ एकपाद प्रायश्चित्तमें वस्त्रका जोड़ा, दोपाद प्रायश्चित्तमें कांसीका पात्र, पादोन (पौन) प्रायश्चित्तमें एक वृष और चतुष्पाद पूर्ण प्रायश्चित्तमें दो गौ देय ॥ १५ ॥ अंग प्रत्यंग युक्त गौके संपूर्ण चेतनगर्भ को गिरानेसे गोवधसे दूना प्रायश्चित्त करै ॥ १६ ॥ पाषाण अथवा दण्डसे प्रहार करके जो पुरुष गौके सींग तोड़देय तौ एकपाद और नेत्र फोड़देय तौ दोपाद व्रत करै ॥ १७ ॥ उस प्रहारसे पूंछ तोड़ देय तौ एक पाद कृच्छ्रव्रत, हड्डी टूटजाय तौ दोपाद कृच्छ्रव्रत, कान टूटजाय तौ तीन पाद कृच्छ्रव्रत और संपूर्ण शरीर भग्नहोजाय तौ पूर्णचतुष्पाद व्रत करै॥१८॥ सींग टूटजाय, हड्डी टूटजाय अथवा कमर टूटजाय और उसके अनन्तर

न विद्यते॥ १९॥ व्रणभंगे च कर्तव्यःस्नेहाभ्यंगस्तु पाणिना।
यवसश्चोपहर्तव्यो यावद्दृढबलोभवेत् ॥ २० ॥ यावत्संपूर्ण
सर्वांगस्तावत्तं पोषयेन्नरः। गोरूपंब्राह्मणस्याग्रे नमस्कृत्य
विसर्जयेत् ॥ २१ ॥ यद्यसंपूर्णसर्वांगो हीनदेहोभवेत्तदा।
गोघातकस्यतस्यार्द्धं प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ २२ ॥ काष्ठ
लोष्ठकपाषाणैः शस्त्रेणैवोद्धतोबलात्। व्यापादयतियोगांतु
तस्यशुद्धिं विनिर्दिशेत् ॥ २३ ॥ चरेत्सांतपनंकाष्ठे प्राजाप-
त्यंतुलोष्ठके। तप्तकृच्छ्रंतु पाषाणे शस्त्रेणैवातिकृच्छ्रकम्॥२४॥
पंचसांतपनेगावः प्राजापत्ये तथात्रयः। तप्तकृच्छ्रे भवंत्यष्टा
वतिकृच्छ्रेत्रयोदश ॥ २५ ॥ प्रमापणेप्राणभृतां दद्यात्तत्प्राति
रूपकम्। तस्यानुरूपंमूल्यं वादद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥ २६ ॥

यदि गौ छः मास पर्यन्त जीवित रहै तौ प्रायश्चित्त नहीं होता है॥ १९॥ प्रहार से गौके शरीरमें घाव होजाय तौ जबतक वह अच्छानहीं होय तबतक अपने हाथसे उस व्रण में घृत तैलादि लगाता रहै, वह गौ जिस समय पर्यन्त दृढ़ और बलवान् न होय तबतक उस के लिये हरी हरी घास लालाकर खिलावै ॥ २० ॥ जबतक गौ नीरोग नहीं होय तबतक उसका पोषणकरै तदनन्तर ब्राह्मण को नमस्कार करकै उस नीरोग गौको छोड़देय ॥ २१ ॥ उस गौके अंग यदि पहलेकी समान पूर्णरीतिसे आरोग्यनहीं होयँ, शरीर का कोई अंगहीन रहजाय तौ गोहत्या पापके प्रायश्चित्तसे आधा प्राय-श्चित्त करै॥ २२ ॥ कोई उद्धत पुरुष काष्ठ (काठ) लोष्ठ (ईंट ढेला आदि) पाषाण अथवा शस्त्रसे बल पूर्वक (जबरदस्ती) गोहत्या करै तौ वह किस प्रकार शुद्ध होसक्ता है सो कहते हैं॥ २३॥ काष्ठसे हत्या करने पर सान्त-पन व्रत, लोष्ठसे हत्या करने पर प्राजापत्य व्रत, पाषाणसे हत्या करने पर तप्तकृच्छ्र और शस्त्रसे गोहत्या करनेपर अतिकृच्छ्र व्रतका अनुष्ठान करै॥ २४॥ सान्तपन व्रतमें पाँच गौ, प्राजापत्यमें तीन गौ तप्तकृच्छ्र में आठ गौ और अतिकृच्छ्र व्रतमें तेरह गौ दान करना चाहिये॥ २५॥ गौ आदिके प्रायश्चित्तके परिमाणके अनुसार उसके अनुरूप (उसी परिमाण की) गौ आदि पुण्य करै अथवा उसकेही अनुसार मूल्य (कीमत) देदेय, भगवान् मनुजीका ऐसा कथन है॥ २६॥ भार वा गाडी आदि

अन्यत्रांकनलक्ष्मभ्यां वाहनेमोचनेतथा। सायंसंगोपनार्थं च नदुष्येद्रोधबंधयोः ॥ २७ ॥ अतिदाहेतिवाहे च नासिकाभेदनेतथा । नदीपर्वतसंचारे प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ २८॥ अतिदाहेचरेत्पादं द्वौपादौवाहनेचरेत् । नासिक्येपादहीनंतु चरेत्सर्वैनिपातने ॥ २९ ॥ दहनात्तुविपद्येत अनड्वान्योक्त्रयंत्रितः । उक्तं पराशरेणैवह्येकपादं यथा विधि ॥ ३० ॥ रोधनं बंधनं योक्त्रं भारः प्रहरणं तथा । दुर्ग प्रेरणयोक्त्रं च निमित्तानि वधस्यषट् ॥ ३१ ॥ बंधपाशसुगुप्तांगो म्रियते यदि गोपशुः । भवने तस्य पापःस्यात्प्रायश्चितार्द्धमर्हति ॥३२॥ न नारिकेलैर्नच शाणवालैर्नचापिमौंजैर्नच बन्ध श्रृंखलैः । एतैस्तु गावो न निबंधनीया बध्वातु तिष्ठेत्परशुं गृहीत्वा ॥३३॥ कुशैः काशैश्च बध्नीयाद् गोपशुं दक्षिणामुखम् ॥

लेचलनेके लिये चरनेको छोडनेके लिये और सायंकालको रक्षाके लिये गौके शरीरमें यदि कोई विशेष चिन्ह करनेको रोध वा वन्धन कराजाय तौ उससे कोई दोष नहीं होता है ॥ २७ ॥ दाग देने के समय यदि अधिक दग्ध होजाय, अति अधिक बोझ लेजाने के लिये लादाजाय यदि नाथा जाय, अथवा यदि कष्टदायक नदी पर्वतके मार्गसे लेजाया जाय तौ प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ २८ ॥ अधिक दग्ध करने पर एकपाद अधिक बोझा लादने पर दो पाद नासिका छेदने पर तीन पाद और एक साथ इन सब पापोंके करने पर पूर्ण चतुष्पाद प्रायश्चित्त करै ॥ २९ ॥ वन्धनकी दशामें अथवा खुले हुए दुहनेके समय गौ का मरण होजाय तौ विधि पूर्वक एक पाद प्रायश्चित्त करै,ऐसा पराशर ऋषिने कहा है ॥३०॥ रोध, बन्धन, योत (जोतना) , अधिक भार लादना, प्रहार और जोतकर नदी पर्वतादि दुर्गम स्थानोंमें लेजाना, इन छःओंमें प्रत्येक वधका कारण है ॥ ३१ ॥ यदि कोई गौ रस्सीसे बँधे हुए प्राणत्याग करदेय तौ गृहके स्वामीको अर्द्धकृच्छ्र व्रत करना चाहिये ॥ ३२ ॥ नारिकेल (नारियल) की रस्सी, सनकी रस्सी,मूँजकी रस्सी अथवा लोहेकी जंजीरसे गौ अथवा वृषको कदापि न बाँधे और यदि बाँधै तौ फरसा हाथमें लिये सर्वदा समीप बैठा रहै ॥ ३३ ॥ गौ अथवा अन्य पशुको दक्षिणमुख करकै कुश अथवा काँस

पाशलग्नाग्निदग्धेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ३४ ॥ यदि त त्र भवेत्काष्ठं प्रायश्चितं कथं भवेत् । जपित्वा पावनीं देवीं मु च्यते तत्र किल्विषात् ॥ ३५ ॥ प्रेरयन् कूपवापीषु वृक्षच्छे देषु पातयन् । गवाशनेषु विक्रीणंस्ततःप्राप्नोतिगोवधं ॥३६॥ आराधितस्तु यः कश्चिद् भिन्नकक्षो यदाभवेत् । श्रवणंहृद यं भिन्नंमग्नोवाकूपसंकटे ॥ ३७ ॥ कूपादुत्क्रमणंचैवभग्नोवा ग्रीवपादयोः । सएवम्रियतेतत्र त्रीन्पादांस्तु समाचरेत्।३८। कूपखाते तटीबंधे नदीबंधे प्रपासु च । पानीयेषु विपन्नानां प्रायश्चित्तं न विद्यते॥ ३९ ॥ कूपखातेतटीखातेदीर्घखातेतथै वच । स्वल्पेषु धर्मखातेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥ ४० ॥

से बाँधै, यदि उसमें अग्नि लगकर पशुका शरीर जलजाय तौ प्रायश्चित्त करने की विधि नहीं है ॥ ३४ ॥ यदि उस स्थानमें तृण होयँ और उस रस्सीमें लगीहुई अग्नि तृणोंमें लगकर पशुका प्रणान्त करदेय तौ पवित्र करने वाली गायत्री का जप करकै पापसे मुक्ति होती है ॥ ३५ ॥ कूप अथवा तालावमें गौको प्रेरण करनेपर, वृक्ष काटकर गौके ऊपर डालने पर अथवा किसी गोभक्षकके हाथ गौ बेच देने पर पूर्ण गोहत्याका पाप होता है ॥ ३६ ॥ विपत्तिसे उद्धार करनेके लिये सबप्रकारकी चेष्टा करने परभी यदि पूर्वोक्त किसी कारणसे गौ का वक्षस्थल, कान अथवा हृदय का कोई भाग भग्न होजाय, अथवा यदि गौ किसी कूप आदि में गिरपड़ै और उसको तिसकूपमें से निकालनेके समय पैर अथवा ग्रीवा टूटजाय और इसकारण तत्काल या कुछकालके अनन्तर गौ का मरण होजाय तौ उस के पापसे मुक्त होने के लिये तीनपाद प्रायश्चित्त करै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ कूप के समीपके गडहे (चौवच्चे) में सरोवर नदी के बँधे हुए घाट पै, प्रपा (पौ) ओं पै जलपान करने के लिये जाकर यदि गौ का मरण होजाय तौ किसी प्रकार का प्रायश्चित्त करनेकी विधि नहीं है ॥३९॥ कूपके समीपका गडहा, नदी वा जलाशय के समीप का गडहा, दीर्घखात (बड़ागडहा) वा साधारण जल पीने का गडहा इन में गिर कर गौ का मरण होजाय तौ उसके निमित्त किसी प्रकारका प्रायश्चित्त न करै ॥ ४०॥

वेश्मद्वारे निवासेषु यो नरः खातमिच्छति। स्वकार्यं गृहखातेषु प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥ निशि बंधनिरुद्धेषु सर्प व्याघ्र हतेषु च। अग्निविद्युद्विपन्नानां प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥४२॥ ग्रामघातेशरौघेण वेश्मभंग निपातने। अतिवृष्टिहतानांच प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥४३॥ संग्रामेपहृतानांचये दग्धावेश्मकेषु च। दावाग्निग्रामघातेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥४४॥ यंत्रितागौ चिकित्सार्थं गूढगर्भविमोचने। यत्नेकृतेविपद्येत प्रायश्चितं न विद्येत ॥४५॥ व्यापन्नानांवहूनांचरोधनेबंधनेपिवा। भिषङ्मिथ्याप्रचारेण प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥४६॥ गोवृषाणां विपत्तौ च यावंतः प्रेक्षका जनाः ॥ अनिवारयतां

घरकेद्वारपर अथवा घरके भीतर यदि कोईगडहा खोदै, अथवाअपने प्रयोजनके लिये वा सर्वसाधारणके निमित्त वा स्थान वनानेके निमित्त गडहा खोदै और यदि उसमें गिरकर गौ का मरण होजायतौ प्रायश्चित्त करनाचाहिये॥४१॥रात्रि में गौ को वाँध कर रोककैरखलेनेपरयदि सर्पकेकाटनेसेवाअग्नितथावज्राघात (विजली गिरने) से यदि उस गौका मरण होजाय तौ प्रायश्चित्तकरने की आवश्यकता नहीं है ॥ ४२ ॥ यदि वाणों से ग्राम पीडित होय, घर टूटकर गिरपडै वा अतिवृष्टि होय इन तीनोंमें किसी कारणसे गौका मरण होजाय तौ प्रायश्चित नहीं होता है ॥ ४३ ॥ जो गौ संग्राम मे, घरमें अग्नि लगने के समय ग्राम को किसी के घेर लेने पर वा दावाग्नि (दौं) से भस्म होजाने में मरण को प्राप्त होयँ उनका प्रायश्चित्त नहीं होता है ॥ ४४ ॥ यदि चिकित्सा करनेके लिये गौ को किसी प्रकार की पीडा दीजाय अथवा (दूषित) गर्भ दूर करना होय, उसमें शक्तिके अनुसार यत्न करने परभी यदि गौ का मरण होजाय तौ प्रायश्चित्त नही होता है ॥ ४५ ॥ वहुत सी गौ अथवा वैलों को यदि एक स्थानमें बाँधकर वा रोककर रक्खा होय,और यदि अनभिज्ञ (अनजान) चिकित्सकसे चिकित्सा करानेमें गौ वा वृषभ का मरण होजाय तौ गोवध का प्रायश्चित्त करै ॥ ४६ ॥ गौ अथवा वैल की अपमृत्यु (अकालमृत्यु) के समय जो अपने नेत्रोंसे देखकर भी उस को तिस आसन्न मृत्युसे

तेषां सर्वेषां पातकं भवेत् ॥ ४७ ॥ एकोहतोयैर्बहुभिःसमे-
तैर्नज्ञायतेयस्यहतोभिघातात् । दिव्येनतेषामुपलभ्यहंतानि
वर्त्तनीयोनृपसन्नियुक्तैः ॥ ४८ ॥ एकाचेद्बहुभिः काचिद्दैवा-
द्व्यापादिता क्वचित् । पादं पादं तु हत्यायाश्चरेयुस्ते पृथक्
पृथक् ॥ ४९ ॥ हतेतुरुधिरं दृश्यंव्याधिग्रस्तः कृशोभवेत् ।
लालाभवति दृष्टेषु एवमन्वेषणं भवेत् ॥ ५० ॥ ग्रासार्थंचो-
दितोवाऽपि अध्वानं नैव गच्छति । मनुनाचैवमेकेन सर्व
शास्त्राणि जानता । प्रायश्चित्तं तुतेनोक्तं गोघ्नश्चांद्रायणं
चरेत् ॥ ५१ ॥ केशानां रक्षणार्थाय द्विगुणंव्रतमाचरेत् ।
द्विगुणे व्रतआदिष्टे दक्षिणाद्विगुणाभवेत् ॥ ५२ ॥ राजा
वा राजपुत्रोवा ब्राह्मणो वा बहुश्रुतः । अकृत्वावपनंतेषां

छुटाने की चेष्टा नहीं करते हैं उन सबों को गोहत्या के पापका भागी होना पडता है ॥ ४७ ॥ यदि बहुत से पुरुष एकत्र इकट्ठे होकर किसी गौ अथवा बैलके ऊपर डेले पत्थर आदि फेंककै पीडा दें और उससे यदि पशुका मरण होजाय और हत्या करने वाले का निश्चय न होसकै तौ राजा अपने कर्मचारियों के द्वारा उनमेंसे प्रत्येक को शपथ दिलाकर उस पशुकी हत्या करने वाले का निश्चय करै ॥ ४८ ॥ यदि बहुतसे पुरुषोंके आघातसे किसी एक गौ का मरण हुआ होय तौ उन प्रहार करने वालोंमें प्रत्येक को अलग २ गोवधका चतुर्थांश प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ ४९ ॥ गौ का मरण होने पर उसके रुधिर के चिन्ह से हत्याकारी को जानै अथवा उन सबमें जो रोगी होजाय, दुर्बल (शुष्कमुख) होय, देखतेही मुख से लार टपकने लगै जो ग्रासके निमित्त प्रेरणा करने पर भी मार्गको न जाय इस प्रकार हत्याकारी का अन्वेषण करै, सर्वशास्त्रोंको जानने वाले अद्वितीय भगवान् मनुने गोहत्यामात्र में चान्द्रायण व्रत का अनुष्ठा करने की व्यवस्था दी है ॥ ५० ॥ ५१ ॥ गोहत्या के प्रायश्चित्तके समय जो केश रखना चाँहै उस को द्विगुण प्रायश्चित्त करना चाहिये और द्विगुण प्रायश्चित्त की द्विगुण दक्षिणा भी देनी चाहिये ॥ ५२ ॥ राजा, राजपुत्र वा बहुज्ञानी ब्राह्मण केशोंका मुंडनन कराकरभी प्रायश्चित्त करसक्ता

प्रायश्चित्तं विनिर्दिशेत् ॥ ५३ ॥ यस्यनद्विगुणन्दानङ्केश श्वपरिरक्षितः तत्पापं तस्य तिष्ठेतत्यक्त्वाचनरकंव्रजेत् ।५४। यत्किंचित् क्रियतेपापं सर्वंकेशेषु तिष्ठति । सर्वान्केशान्स-मुद्धृत्य छेदयेदंगुलिद्वयम् ॥ ५५ ॥ एवंनारी कुमारीणां शिरसोमुंडनंस्मृतं। नस्त्रियांकेशवपनंनदूरेशयनासनम्।।५६॥ नचगोष्ठवसेद्रात्रौ नदिवागाअनुव्रजेत्। नदीषुसंगमेच्चैव अर-ण्डेषुविशेषतः॥५७॥नस्त्रीणामजिनंवासोव्रतमेवंसमाचरेत् । त्रिसंध्यं स्नानमित्युक्तं सुराणामर्चनं तथा ॥ ५८ ॥ बन्धु मध्ये व्रतंतासां कृष्णा चांद्रायणादिकं । गृहेषु सततं तिष्ठेच्छु चिर्नियममा चरेत् ॥५९॥ इहयोगोवधं कृत्वा प्रच्छादयि-तुमिच्छति । सयाति नरकं घोरं काल सूत्रमसंशयम् ॥ ६०॥ विमुक्तो नरकात्तस्मान्मर्त्यलोके प्रजायते । क्लीवोदुःखी च

है ॥ ५३ ॥ जो पुरुष केश रक्खै और द्विगुण प्रायश्चित्त न करै वा द्विगुण दक्षिणा नहीं देय तौ उस का पाप नष्ट नहीं होता है और ऐसी व्यवस्था देनेवाला नरकगतिको प्राप्त होता है ॥ ५४ ॥ जो कुछ पाप किया जाता है वह सब केशोंमें वास करता है इसकारण संपूर्ण केशोंको हाथ में पकड कर अग्रभागके दो २ अंगुल केश कटवा देय ॥ ५५ ॥ यह व्यवस्था केवल कुमारी और सधवा (जिन का पति जीवित है ऐसी) स्त्रियोंके निमित्त ही है, इन स्त्रियोंके संपूर्ण मुण्डन और दूर स्वतन्त्र शयन अथवा स्वतन्त्र भोजन विधान नहीं है ॥ ५६ ॥ यह स्त्रियें रात्रिमें गोशालामें शयन और दिनमें गौके पीछे २ गमन न करै, विशेष करकै नदी पै, जनसमूह केस्थानमें और जंगलमें जाना उनके लिये अनुचित है ॥ ५७ ॥ स्त्री कदापि मृगचर्म न ओढै, तीनों कालमें स्नान और देवपूजन करै ॥५८ ॥ स्त्रियें कृच्छ्रचान्द्रायण आदि व्रतोंको बान्धवोंके मध्यमें ही करैं, उनको सदागृह में स्थित रहकर सकल पवित्र नियमोंको पालन करना चाहिये ॥ ॥५९॥ जो इस लोकमें गोवध करकै उसको गुप्त रखने की इच्छा करता है, निः सन्देह वह कालसूत्र नामक घोर नरकको प्राप्त होता है ॥ ६० ॥ उस भयानक नरक से छूटने पर भी उसको फिर मनुष्य योनिमें जन्म

कुष्ठी च सप्तजन्मानिवैनरः॥६१॥तस्मात्प्रकाशयेत्पापंस्व धर्मं सततंचरेत्। स्त्रीबालभृत्य गोभृत्येष्वति कोपंविवर्जयेत् ॥६२॥

इतिश्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥



चातुर्वर्णेषु सर्वेषु हीयं प्रोक्ता तु निष्कृतिः। अगम्या गमने चैव शुद्धौ चांद्रायणं चरेत् ॥ १ ॥ एकैकंह्रासयेद्ग्रासं कृष्णे शुक्ले चवर्द्धयेत्। अमावस्यां न भुंजीतह्येष चांद्रायणे विधिः ॥ २ ॥ कुक्कुटांगप्रमाणं तु ग्रासं वै परिकल्पयेत्। अन्यथा जात दोषेण न धर्मो न चशुद्ध्यते ॥ ३ ॥ प्रायश्चित्तेत-तश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मण भोजनम्। गोद्वयंवस्त्र युग्मंच दद्याद्वि-प्रेषु दक्षिणाम् ॥४॥ चांडालींवाश्वपाकींवा ह्यनुगच्छतियोद्वि

धारण कर वहिरा, दुःखी और कुष्ठरोगी होकर क्रमसे सातजन्म विताने पडते हैं ॥ ६१ ॥ इसकारण पाप करकै उसको कदापि छुपावै नहीं, प्रकाश करदेय, और स्त्री, वालक भृत्य, गौ तथा ब्राह्मण के ऊपर कदापि कोप न करै ॥ ६२ ॥

इति श्रीपाराशरीये धर्मशास्त्रे भाषाटीकायांनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥



ब्राह्मण क्षत्रियादि चारों वर्णोंके पापसे छूटनेका उपाय कहते हैं। अगम्य स्थानमें गमन करनेपर जो पाप होता है चान्द्रायणव्रत का अनुष्ठान करकै उससे मुक्तिहोती है ॥१॥ कृष्णपक्षमें प्रतिदिन एक २ ग्रास कमकरै और शुक्लपक्षमें प्रतिदिन एक २ ग्रास वढावै, अमावास्याके दिन कुछ भोजन न करै यह चान्द्रायणकी विधि है ॥ २ ॥ ग्रास मुर्गीके अण्डेकी वरावर वडा वनावै जो पुरुष इसके अन्यथा करै उसको न शुद्धजाने न धर्माचरण करनेवाला जानै ॥ ३ ॥ प्रायश्चित्त का कार्य यथावत् होजाने पर ब्राह्मणों को भोजन करावै, और प्रत्येक ब्राह्मणको दोगौ तथा एक जोड़ा वस्त्र दक्षिणा देय ॥ ४ ॥ ब्राह्मण, चाण्डाली वा श्वपाकी के विषै गमन करने पर

जः ॥ त्रिरात्रमुपवासीच विप्राणामनुशासनात् ॥ ५ ॥ स शिखंवपनं कृत्वा प्राजापत्य द्वयंचरेत्। ब्रह्मकूर्चंततःकृत्वा कुर्याब्राह्मण तर्पणम् ॥६॥ गायत्रींच जपेन्नित्यं दद्याद्गोमिथुनद्वयम्। विप्रायदक्षिणांदद्याच्छुद्धि माप्नोत्य संशयम् ॥ ७ ॥ गोद्वयंदक्षिणांदद्या च्छुद्धिं पाराशरोब्रवीत् ॥ ८ ॥ क्षत्रियोवाथवैश्योवा चांडलींगच्छतोयदि। प्राजापत्य द्वयं कुर्याद्दद्याद्गोमिथुनंतथा। श्वपाकीमथ चाण्डालीं शूद्रोवैय-दिगच्छति ॥९॥ प्राजापत्यं चरेत्कृच्छ्रं चतुर्गो मिथुनंददेत्॥ ॥ १० ॥ मातरंयदिगच्छेत्तु भगिनीं स्वसुतांतथा। एतास्तु मोहितो गत्वा त्रीणिकृच्छ्राणि संचरेत् ॥ ११ ॥ चांद्रायण त्रयंकुर्याच्छिश्नच्छेदेन शुद्ध्यति। मातृष्वसृगमेचैव आत्ममेढ्रनिकृंतनम् ॥ १२ ॥ अज्ञानेनतुयोगच्छेत्कुर्याच्चांद्राय-

ब्राह्मणकी आज्ञाके अनुसार तीनराति उपवास करै ॥ ५ ॥ फिर शिखा सहित मुण्डन कराकर दो प्राजापत्य व्रत करै, तदनन्तर बिधिपूर्वक ब्रह्मकूर्च (गौकामूत्र, दधि, दुग्ध, घृत और कुशोंका जल इन सबको बिधिपूर्वक पान) करकै, भोजनादिसे ब्राह्मणों को तृप्त करै ॥ ६ ॥ तदनन्तर निरन्तर गायत्रीका जप करै ब्राह्मणको गोमिथुन (एक गौ एक बैल) दक्षिणा देकर निःसन्देह शुद्धिको प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ दो गौ दक्षिणा देकर शुद्धि होती है ऐसा पाराशरजीका कथन है क्षत्रिय अथवा वैश्य यदि चाण्डाली से गमन करैं तौ ॥ ८ ॥ दो प्राजापत्य व्रतकरै और ब्राह्मणको गोमिथुन दानदेय शूद्र यदि श्वपाकी वा चाण्डालीसे गमन करै तौ ॥ ९ ॥ एक प्राजापत्य कृच्छ्र व्रत करै और ब्राह्मणको चार गोमिथुनदान देय ॥ १० ॥ अपनी माता, भगिनी और पुत्री के विषैं अज्ञान से गमन करकै तीन कृच्छ्र व्रत करै ॥ ११ ॥ तदनन्तर वह पुरुष तीन चान्द्रायण व्रत करकै अपनी लिङ्गेन्द्रियको काटडालै और माताकी बहिनके विषैं गमन करकै भी लिंङ्गेन्द्रियको काटडालनेपरही शुद्धि होती है ॥ १२ ॥ अज्ञानसे यदि माताकी बहिनके विषैं गमन करै तौ दो चान्द्रायण व्रत करै

गाद्वयम् । दशगोमिथुनं दद्यात्कुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् ॥ १३ ॥ पितृदारान्समारुह्य मातुराप्तांच भ्रातृजाम् । गुरुपत्नींस्नुषां चैवभ्रातृभार्यांतथैव च ॥ १४ ॥ मातुलानीं सगोत्रांच प्राजापत्यत्रयंचरेत् । गोद्वयं दक्षिणांदत्वा मुच्यते नात्रसंशयः ॥ १५ ॥ पशु वेश्यादि गमने महिष्युष्ट्रींकपींस्तथा । खरींच शूकरीं गत्वा प्राजापत्यं समाचरेत् ॥ १६ ॥ गोगामी च त्रिरात्रेण गामेकां ब्राह्मणेददेत् । महिष्युष्ट्र खरीगामीत्व होरात्रेण शुद्ध्यति ॥ १७ ॥ डामरेसमरेवापि दुर्भिक्षेवाजन क्षये बंदिग्राहे भयार्ते वा सदास्वस्त्रीं निरीक्षयेत् ॥ १८ ॥ चांडालैः सहसंपर्कं या नारी कुरुते ततः ॥ १९ ॥ विप्रान्दश वरान्गत्वा स्वयंदोषं प्रकाशयेत् ॥ १९ ॥ आकंठसंमितकूपे गोमयोदककर्दमे । तत्रास्थित्वा निराहारा त्वहोरात्रेण नि-

और ब्राह्मणोंको दश गौ और दश वृषभ दान करकै देय तब शुद्धि होती है ऐसा पाराशरजीका कथन है ॥ १३ ॥ जो पुरुष पिताकी स्त्री (सौतेली माता), माताकी सखी, भ्राताकी पुत्री, गुरुकी स्त्री, पुत्रकी स्त्री, भ्राताकी स्त्री, मातुल (मामा) की स्त्री तथा अपने गोत्रकी किसी कन्याके साथ गमन करै वह तीन प्राजापत्य व्रत करै और तदनन्तर दो गौ दक्षिणा देय तब निःसन्देह शुद्ध होजाताहै ॥ १४ ॥ १५ ॥ पशु, वेश्या, महिषी, (भैंस), उष्ट्री (ऊंटनी), वानरी, गर्दभी और शूकरी से गमन करकै प्राजापत्य व्रत करै ॥ १६ ॥ गौके विषैं गमन करने पर तीन रात्रि उपवास करकै ब्राह्मणको एक गौदान देय । महिषी, उष्ट्री और गर्दभीके साथ गमन करनेवाला एक रात्रि दिन उपवास करकै भी शुद्ध होजाताहै ॥ १७ ॥ मारामारी काटाकाटी के समय, युद्धके समय, दुर्भिक्षके समय, जनक्षय (हैजा महामारी आदि) के समय भयप्राप्त होनेके समय और कोई आक्रमण (हमला) करनेवाला बन्दी करकै लेजाय उस समय, सदा अपनी स्त्रीकी ओर दृष्टि रक्खै ॥ १८ ॥ जो स्त्री किसी चाण्डालके साथ सहवास करै वह दश श्रेष्ठ ब्राह्मणोके पास जाकर अपना दोष प्रकाशित करै ॥ १९ ॥ गोबरके जल और कीच से भरेहुए कूप में कंठ पर्यंत मग्न होकर विना भोजन करेहुए तहां एक रात्रिदिन रहकर निकल

च्क्रमेत् ॥२०॥ सशिखं वपनंकृत्वा भुंजीयाद्यावकौदनम् ॥ त्रिरात्रमुपवासित्वा त्वेकरात्रं जलेवसेत् ॥ २१ ॥ शंखपुष्पी लतामूलंपत्रंवाकुसुमंफलम् । सुवर्णंपंचगव्यंचक्काथयित्वा पिवेज्जलं ॥ २२ ॥ एकभक्तंचरेत्पश्चाद्यावत्पुष्पवतीभवेत् । व्रतंचरातितद्यावत्तावत्संवसतेबहिः ॥ २३ ॥ प्रायश्चित्तेततश्चीर्णेकुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् । गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिःपाराशरोब्रवीत् ॥२४॥ चातुर्वर्ण्यस्यनारीणांकृच्छ्रंचांद्रायणव्रतम्। यथाभूमिस्तथानारीतस्मात्तांनतुदूषयेत् ॥ २५ ॥ वंदिग्राहेण याभुक्ताहत्वाबद्धावलाद्भयात् । कृत्वासांतपनंकृच्छ्रं शुद्ध्येत्पाराशरोब्रवीत् ॥ २६ ॥ सकृद्भुक्तातुयानारीनेच्छंतीपापकर्मभिः । प्राजापत्येनशुद्ध्येतऋतुप्रस्रवणेनच ॥ २७ ॥ पतत्यर्द्धं

आवै ॥ २० ॥ तदनन्तर शिखा सहित समस्त शिरका मुण्डन कराकै आधेपके हुए यव भोजन करै, तदनन्तर तीन रात्रि उपवास करकै एक रात्रि जलमें वास करै ॥ २१ ॥ फिर शंखपुष्पी औषधिकी जड़, पत्ते, फूल, फल और सुवर्ण तथा पञ्चगव्य इन सबको एकत्र पीसकर औटावै, तिसका जल पान करै ॥२२॥ तदनन्तर जबतक रजस्वला होय तबतक एक अन्नका पकाहुआ भोजन दिन में एक बार पावै और जबतक यह व्रत पूर्ण नहीं होय तब तक घरसे बाहर निवास करै ॥ २३ ॥ इसप्रकार प्रायश्चित्तकी समाप्ति होजाने पर ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दो गौ दक्षिणा देय इसप्रकार प्रायश्चित्त करनेपर शुद्धि होती है ऐसा पाराशरजीका कथन है ॥ २४ ॥ चारोंवर्णोंकी स्त्री दोषयुक्त होनेपर कृच्छ्रचान्द्रायण व्रत करैं, भूमि और स्त्री दोनों समान हैं इसकारण उनको दूषित न करै ॥ २५ ॥ जो स्त्री बंदी करकै अन्यके द्वारा उपभोग करीगई है, अथवा प्रहार करकै कैद करकै, भय दिखाकर और बलपूर्वक (जबरदस्ती) अन्य पुरुषों करकै जो स्त्री भोग करीगई है, पाराशर कहते हैं कि—वह स्त्री कृच्छ्र सांतपनव्रत करकै शुद्ध होती है ॥ २६ ॥ जो स्त्री स्वयं इच्छा न करतीहुई पापकर्म पुरुषों करकै बलपूर्वक एकबार भोगीगई है वह प्राजापत्यव्रत करकै और ऋतुधर्म होनेपर शुद्ध होजाती है ॥ २७ ॥ जिसकी स्त्री सुरा (मदिरा)पान करती

शरीरस्ययस्यभार्यासुरांपिवेत्। पतितार्द्धं शरीरस्यनिष्कृति र्नविधीयते॥२८॥गायत्रींजपमानस्तुकृच्छ्रं सांतपनंचरेत्॥२९॥ गोमूत्रंगोमयंक्षीरंदधिसर्पिःकुशोदकम् । एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सांतपनंस्मृतं ॥ ३० ॥ जारेण जनयेद्गर्भं मृतेत्यक्ते गतेपतौ। तांत्यजेदपरेराष्ट्रे पतितां पापकारिणीम्॥ ३१ ॥ ब्राह्मणीतुयदागच्छेत्परपुंसासमन्विता । सातुनष्टा विनिर्दिष्टा न तस्यागमनं पुनः ॥ ३२ ॥ कामान्मोहाच्चयागच्छेत्त्यक्त्वा बन्धून्सुतान्पतिं । सापिनष्टा परेलोके मानुषेषुविशेषतः ॥ ३३ ॥ मदमोहगतानारी क्रोधाद्दण्डादिताडिता । अद्वितीयंगताचैव पुनरागमनं भवेत् ॥ ३४ ॥ दशमेतु दिने प्राप्ते प्रायश्चित्तं न विद्यते। दशाहं न त्यजेन्नारीं त्यजेन्न-

है उसका आधाशरीर पतित होजाताहै और जिसका आधाशरीर पतित होजाताहै उसकी शुद्धि नहीं होतीहै अर्थात् निःसन्देह नरक गति प्राप्त होतीहै ॥ २८ ॥ कृच्छ्र सान्तपन ब्रत करनेके समय निरन्तर गायत्रीका जप करता रहै ॥ २९ ॥ गौका गोबर--मूत्र--दूध--दही--घृत और कुशका जल पान करकै एकरात्रि उपबास करना, कृच्छ्र सान्तपन कहाताहै ॥ ३० ॥ पतिके परदेश जानेपर अथवा पतिको त्याग करकै या पतिका मरण होने के अनन्तर जोस्त्री अन्य पुरुष संयोगसे गर्भ धारणकरै उस पतित पाप चारिणीको अन्य राज्यमें जाकर छोड़ आवै ॥ ३१ ॥ यदि कोई ब्राह्मणी पर पुरुषके साथ चलीजायतौ उसको नष्ट जानै, वह फिर लौटकर पतिके घरमे नहीं आसक्तीहै ॥ ३२ ॥ काम अथवा मोहके बशीभूत होकर कोई स्त्री पति, पुत्र और बांधवोंको त्यागकर चलीजायतौ वह परलोकमेंविशेषतः मनुष्यसमाज [इसलोक] में नष्ट होजातीहै ॥३३ ॥ जो स्त्री मद वा मोहसे अथबा क्रोधसे दण्डसे ताडन करनेसे विनाकिसीके पासजाके चलीआवे॥३४॥ यदि उस स्त्रीको गयेहुए दश दिन होजांय तौ प्राचिश्त्त करना नहींचाहिये क्योंकि दश दिनतक स्त्रीको न त्यागे परन्तु नष्टा सुनी जायतो उसको

ष्टांश्रुतांतथा ॥३५॥ भर्त्ताचैवचरेत्कृच्छ्रं कृच्छ्रार्द्धं चैव बान्धवाः । तेषां भुक्त्वा च पीत्वा च अहोरात्रेण शुद्ध्यति ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणीतु यदा गच्छेत्परपुंसाविवर्जिता । गत्वापुंभिःसमंयाति त्यजेयुस्तांतुगोत्रिणः ॥ ३७ ॥ पुंसोयादिगृहंगच्छेत्तदाशुद्धंगृहंभवेत् पितृमातृगृहंयच्चजारस्यैवतुतद्गृहम् ॥ ३८ ॥ उल्लिख्यतद्गृहंपश्चात्पंचगव्येनसेचयेत् । त्यजेच्चमृण्मयंपात्रंवस्त्रंकाष्ठंचशोधयेत् ॥३९॥संभाराञ्छोधयेत्सर्वान्गोकेशैश्च फलोद्भवान् । ताम्राणि पंच गव्येन कांस्यानिदश भस्माभिः॥४०॥ प्रायश्चित्तंचरेद्विप्रोब्राह्मणैरुपपादितम् । गोद्वयंदक्षिणांदद्यात्प्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥४१॥ इतरेषामहोरात्रंपंचगव्यंचशोधनम् । उपवासैर्व्रतैःपुण्यैःस्नानसंध्यार्चनादिभिः ॥ ४२ ॥ जपहोमदयादानैःशुद्ध्यन्तेब्राह्मणाःसदा ।

त्यागदे ॥ ३६ ॥ उस स्त्रीकापति कृच्छ्रव्रत और पतिके बांधव अर्द्ध कृच्छ्रव्रत करैं और उनके घर जिसने भोजन कियाहो वा जलपान कियाहो वोह अहो रात्रसे (एकरातदिन भोजन न करने) से शुद्ध होताहै ॥ ३५ ॥ जो ब्राह्मणी निषेध करने परभी (अन्य) पुरुषके संग चलीजाय वह यदि दूसरे पुरुषका संग करके शीघ्र उसी अपने पतिके समीप आवे तौ सगोत्री उसे त्यागदें ॥ ३७ ॥ यदि वह जार पुरुषके घरमें चलीआवै तो वह घर और उस स्त्रीके पिता—और माताका घर अशुद्ध होजाते हैं ॥ ३८ ॥ उस घरको खोदकर पीछे पंचगव्यसे छिड़के और मिट्टीके पात्रोंको फेंकदे वस्त्र तथा काष्ठके पात्रोंको शुद्ध करै ॥ ३९ ॥ तथा फलकी सामग्रीयों को गौके चँवरसे, तांबेकी वस्तुको पंचगव्यसे और कांसीकी वस्तु को दशबार भस्मलगाकर शुद्ध करना चाहियै॥४०॥वह ब्राह्मण ब्राह्मणोंके कहेहुए प्रायश्चित्तको करै और दो गौ दक्षिणा दे तथा दो प्राजापत्यव्रत करै ॥४१॥ और इतर बन्धु अहोरात्रव्रत करके और पंचगव्य पानकरकै तथा उपवास—व्रत—पुण्य—स्नान—संध्या—पूजन—आदिसे और जप—होम—दया—दान—इनसे ब्राह्मण आदि शुद्ध होते हैं—आकाश—पवन अग्नि

आकाशंवायुरग्निश्चमेध्यंभूमिगतंजलं ॥ नदुष्यंति चदर्भाश्चयज्ञेषुचमसास्तथा ॥ ४३ ॥

इतिपाराशरीयेधर्मशास्त्रेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥



अमेध्यरेतोगोमांसंचांडालान्नमथापिवा । यदिभुक्तंतुविप्रेणकृच्छ्रं चांद्रायणंचरेत् ॥ १ ॥ तथैवक्षत्रियोवैश्यस्तदर्धंतु समाचरेत् । शूद्रोऽप्येवयदाभुंक्तेप्राजापत्यंसमाचरेत् ॥ २ ॥ पंचगव्यंपिवेच्छूद्रोब्रह्मकूर्चीपिवेद्द्विजः । एकद्वित्रिचतुर्गाश्च दद्याद्विप्राद्यानुक्रमात् ॥३॥ शूद्रान्नंसूतकस्यान्नमभोज्यस्यान्नमेवच । शंकितं प्रतिषिद्धान्नं पूर्वोच्छिष्टं तथैवच ॥ ४ ॥ यदि भुक्तं तु विप्रेण अज्ञाना दापदापिवा । ज्ञात्वा समाचरेत्कृच्छ्रं ब्रह्म कूर्चं तु पावनं ॥ ५ ॥ व्यालनकुलमार्जारै रन्न

और पृथ्वी में पड़ाहुआ जल तथा कुशा ये इस प्रकार अशुद्ध नहीं होते जैसे यज्ञोंमें चमसा (पात्र विशेष) अशुद्ध नहीं होताहै ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

इतिपाराशरीयेधर्मशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥



अशुद्ध पदार्थ, वीर्य, गौका मांस और चांडालका अन्न यदि इन बस्तुओं को ब्राह्मण ने भक्षण करलिया हो तो उसकी चांद्रायणब्रत करनेसे शुद्धि होती है ॥ १ ॥ तथा यदि क्षत्रीने इनको खा लियाहो तौ अर्द्ध चांद्रायणब्रत करै और शूद्रभी इसीप्रकार खाले तो प्राजापत्यब्रत करकै शुद्धि होती है ॥ २ ॥ और शूद्र पंचगव्यको पानकरै और द्विज ब्रह्मकूर्चको पीवै और ब्राह्मण आदि चारों वर्ण क्रमसे एक दो तीन और चार गौओंका दान करें ॥ ३ ॥ शूद्रका अन्न सूतकका अन्न और अभोज्य (जिसका भोजन करना मने हो) का अन्न जिसमें कुछ अशुद्ध आदिकी शंका हो वह अन्न निषिद्धों का अन्न और उच्छिष्ट अन्न ॥ ४ ॥ इन अन्नोंको अज्ञानसे वा बिपत्ति पड़ने के समय ब्राह्मण भक्षे तो उसको जानकर कृच्छ्रब्रत करै और पवित्र करनेवाले ब्रह्मकूर्चको भी करै ॥ ५ ॥ सांप नाला बिलाव इन्होंने जिस अन्नको उच्छिष्ट (जूंठा) किया हो तिल और कुशाका जल छिड़कने से

मुच्छिष्टितं यदा। तिलदर्भो दकैःप्रोक्ष्य शुद्ध्यते नात्र सं-
शयः ॥ ६ ॥ शूद्रोप्यभोज्यंभुक्त्वान्नं पंचगव्येन शुद्ध्यति।
क्षत्रियोवापि वैश्यश्च प्राजापत्येन शुद्ध्यति ॥ ७ ॥
एकपंक्त्युपविष्टानांविप्राणांसहभोजने । यद्य कोपित्यजेत्
पात्रंशेषमन्नं नभोजयेत् ॥ ८ ॥ मोहाद्भुंजीतयस्तत्रपंक्ताबु-
च्छिष्टभोजने। प्रायश्चित्तं चरेद्विप्रः कृच्छ्रं सांतपनंतथा ॥९॥
पीयूषंश्वेतलशुनं वृंताकफलगृंजने । पलांडुं वृक्षनिर्यासंदे-
वस्वंकवकानिच ॥ १० ॥ उष्ट्रीक्षीरमवीक्षीरमज्ञानाद्भुंजते-
द्विजः। त्रिरात्रमुपवासेनपंचगव्येनशुद्ध्यति ॥ ११ ॥ मंडूकं
भक्षयित्वातुमूषिकामांसमेवच। ज्ञात्वाविप्रस्त्वहोरात्रंयावका
न्नेनशुद्ध्यति ॥ १२ ॥ क्षत्रियश्चापिवैश्यश्चक्रियावंतौशुचि-
व्रतौ। तद्गृहेषुद्विजैर्भोज्यंहव्यकव्येषुनित्यशः ॥ १३ ॥ घृतं
क्षीरंतथातैलंगुडंतैलेनपाचितम्। गत्वानदीतटेविप्रोभुंजीया-

उस अन्नकी शुद्धि होती है इसमें संशय नहीं है ॥ ६ ॥ शूद्रभी अभोज्य
अन्नको खाकर पंचगव्यसे शुद्ध होता है और क्षत्रिय और वैश्य यदि अ-
भोज्य अन्नको खाले तौ प्राजापत्य व्रत करनेसे शुद्ध होते हैं ॥ ७ ॥
संग भोजन करते और एक पंक्तिमें बैठेहुए ब्राह्मणोंमेंसे यदि एक ब्राह्मण
भी पात्रको त्याग दे अर्थात्—भोजन करतेसे खड़ा होजायतो सब ब्राह्मण
शेष अन्नको न खांय ॥ ८ ॥ उस पंक्तिमें उच्छिष्ट भोजनको जो अज्ञानसे
खाताहै वह ब्राह्मण सांतपन कृच्छ्र प्रायश्चित्त करै ॥ ९ ॥ पेवची—श्वेत
लहसन—बैंगन गाजर (सलजम) वृक्षका गोंद—देवताका द्रव्य
कवक (पृथवीकी ढाल) ॥ १० ॥ ऊंटनी और भेड़का दूध इनको जो
द्विज अज्ञानसे खाताहै वह तीन रात्रि उपवास और पंचगव्य से शुद्ध हो-
ताहै ॥ ११ ॥ मेंडक और मूसेके मांसको जानकर ब्राह्मण खाताै अहो-
रात्र जौं खाकर शुद्ध होताहै ॥ १२ ॥ जो क्रिया वाले क्षत्रिय वैश्यऔर
शुद्ध व्रत (आचरण) करते हैं उनके घर हव्य और कव्य (यज्ञ और
श्राद्ध) में सदा भोजन करैं ॥ १३ ॥ घी—दूध—तेल—तेल से पका गुड़

तुशूद्रभाजने ॥ १४ ॥ मद्यमांसरतंनित्यं नीचकर्म प्रवर्तकम्। तंशूद्रंवर्जयेद्विप्रः श्वपाकमिवदूरतः ॥ १५ ॥ द्विजशुश्रूषणरतंमद्यमांसविवर्जितम् । स्वकर्मनिरतान्नित्यंतं शूद्रन्नत्यजेद्द्विजः ॥ १६ ॥ अज्ञानाद्भुंजतेविप्राः सूतकेमृतकेपिवा। प्रायश्चित्तं कथंतेषांवर्णेवर्णेबिनिर्दिशेत्॥१७॥ गायत्र्याऽष्टसहस्रेण शुद्धिःस्याच्छूद्रसूतके। वैश्ये पंच सहस्रेण त्रिसहस्रेण क्षत्रिये ॥ १८ ॥ ब्राह्मणस्य यदा भुंक्ते द्वेसहस्रं तुदापयेत्। अथवावामदेव्येन साम्ना चैकेन शुद्ध्यति ॥ १९ ॥ शुष्कान्नं गोरसंस्नेहं शूद्रवेषेण आहृतं। पक्वं विप्रगृहे भुंक्ते भोज्यंतं मनुरब्रवीत् ॥ २० ॥ आपत्कालेतु विप्रेण भुक्तं शूद्रगृहे यदि। मनस्तापेनशुद्ध्येतद्रुपदांवासकृज्जपेत् ॥ २१ ॥ दासनापितगोपालकुलामित्रार्द्धसीरिणः। एतेशूद्रेषुभोज्यान्नायश्चात्मा

इनको नदीके तटपर जाकर शूद्रके पात्र में भी खाले ॥ १४ ॥ जो शूद्र मदिरा और मांसमें रत हो और नीच कर्म में वर्तता हो उस शूद्रको श्वपाक के समान दूरसेही बर्जदे ॥ १५ ॥ द्विजोंकी सेवा में तत्पर मदिरा और मांस बिबर्जित और अपने कर्ममें तत्पर जोशूद्र उनका ब्राह्मण त्याग न करै ॥ १६ ॥ जो ब्राह्मण अज्ञानसे सूतक बा मृतकमें जीमतेहैं उनका प्रायश्चित्त वर्ण२में कैसे कहाहै ॥ १७ ॥ शूद्रके सूतकमें आठ हजार गायत्री से, बैश्यकेमें पांच हजार गायत्रीसे और क्षत्रिय केमें एक हजार गायत्री से शुद्धि होतीहै ॥ १८ ॥ यदि ब्राह्मणके सूतकमें खायतो दोहजार गायत्री जपै अथवा बामदेव ऋषिके कहेहुए एक सामवेदसेही शुद्ध होताहै ॥ १९ ॥ शूद्रका अन्न और गोरस और स्नेह (घी आदि) येसब यदि शूद्रके घर से लाकर ब्राह्मणके घरपर पक्वकर खायतो वह भोजनके योग्यहै यह मनुजीने कहाहै ॥ २० ॥ यदि आपत्काल में ब्राह्मणने शूद्रके घर भोजन करलिया होयतो मनके पश्चात्तापसे शुद्ध होताहै वा एकबार द्रुपदामंत्रको जपै ॥ २१ दास–नाई–गोपाल कुलका मित्रअर्द्धसीरी (किसानका साझी) इतनों का और अपने आपको ऐसे निबेदन करदे किमैं आपकाहूं, उसका अन्न भो-

नंविधीयते ॥ २२ ॥ शूद्रकन्यासमुत्पन्नोब्राह्मणेनतुसंस्कृतः ।
असंस्काराद्भवेद्दासः संस्कारादेवनापितः ॥ २३ ॥ क्षत्रिया-
च्छूद्रकन्यायांसमुत्पन्नस्तुयःसुतः । सगोपालइतिख्यातोभो-
ज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २४ ॥ वैश्यकन्यासमुद्भूतोब्राह्मणेनतु
संस्कृतः । सह्यार्द्धिकइतिज्ञेयोभोज्योविप्रैर्नसंशयः ॥ २५ ॥
भांडस्थितमभोज्येषुजलंदधिघृतंपयः । अकामतस्तुयोभुंक्ते
प्रायश्चित्तं कथंभवेत् ॥ २६ ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियोवैश्यः शूद्रो-
वाउपसर्पति ब्रह्मकूर्चोपवासेनयाज्यवर्णस्यनिष्कृतिः ॥ २७ ॥
शूद्राणांनोपवासः स्याच्छूद्रोदानेनशुद्ध्यति । ब्रह्मकूर्चमहो-
रात्रं श्वपाकमपिशोधयेत् ॥ २८ ॥ गोमूत्रंगोमयंक्षीरंदधि
सर्पिः कुशोदकम्।निर्दिष्टंपंचगव्यंचपवित्रं पापशोधनम्॥२९॥
गोमूत्रंकृष्णवर्णायाःश्वेतायाश्चैवगोमयम् । पयश्चताम्रवर्णा
यारक्तायागृह्यतेदधि ॥ ३० ॥ कपिलायाघृतंग्राह्यं सर्वकापि

जनके योग्यहै ॥ २२ ॥ जो संतान ब्राह्मणसे शूद्रकी कन्यामें पैदाहो यदि उसका संस्कार न होयतो वह दास (धीमर) और संस्कार होयतो नापित (नाई) होताहै ॥ २३ ॥ क्षत्रियसे जोपुत्र शूद्रकी कन्यामें पैदाहो उसे गोपाल कहतेहैं उसके यहां ब्राह्मण निःसंदेह भोजन करैं ॥ २४ ॥ वैश्यकी कन्या में जो पुत्र ब्राह्मणसे पैदाहो और जिसके संस्कारभी हों उसे आर्द्धिक कहतेहैं उसके यहांभी ब्राह्मण निसंदेह भोजन करैं ॥ २५ ॥ जिनका भोजन अनुचितहै उनके पात्रमें रक्खे जल–दही—घी—दूध–इनको जो खाताहै उसका प्रायश्चित्त कैसे हो ॥ २६ ॥ ब्राह्मण–क्षत्रिय–वैश्य–शूद्र जो खांय तो यज्ञ के योग्य तीनों वर्णोंका प्रायश्चि ब्रह्मकूर्च उपवाससे शुद्ध होता है ॥२७॥ और शूद्रोंको उपवास नहीं करना चाहिये।किन्तु शूद्रदानसे ही शुद्ध होता है अहोरात्र का उपवास श्वपाकको भी शुद्ध करसक्ता है ॥२८॥ गोमूत्र–गोबर–दूध–दही-घी-कुशाका जल--यहपवित्र और पापोंका नाशकरनेवाला पंचव्य कहा है ॥ २९ ॥ काली गौका गोमूत्र, सपेद गौका गोबर, तांबेके रंगकी का दूध, लालगौका दही ॥ ३० ॥ कपिलाका घी लेना अथवा कपिला-

लमेववा। मूत्रमेकपलंदद्यादंगुष्ठार्द्धं तुगोमयं ॥ ३१ ॥
क्षीरंसप्तपलंदद्याद्दधित्रिपलमुच्यते। घृतमेकपलंदद्यात्पल
मेकंकुशोदकम्॥३२॥गायत्र्यादायगोमूत्रंगंधद्वारेतिगोमयम्।
आप्यायस्वेतिचक्षीरंदाधिक्राव्णस्तथादधि ॥ ३३ ॥ तेजो
सिशुक्रमित्याज्यंदेवस्यत्वाकुशोदकम्।पंचगव्यमृचापूतंस्थाप
येदग्निसन्निधौ ॥ ३४ ॥ आपोहिष्ठेतिचालोड्यमानस्तोकेति
मंत्रयेत्। सप्तावरास्तुयेदर्भाअच्छिन्नाग्राः शुकत्विषः ॥३५॥
एतैरुद्धृत्यहोतव्यंपंचगव्यंयथाविधि। इरावतीइदंविष्णुर्मा
नस्तोकेचशंवती ॥ ३६ ॥ एताभिश्चैवहोतव्यंहुतशेषंपिवेद्
द्विजः आलोड्यप्रणवेनैवनिर्मथ्यप्रणवेनतु ॥ ३७ ॥ उद्धृत्य
प्रणवेनैवपिबेच्चप्रणवेनतु। यत्त्वगस्थिगतंपापंदेहेतिष्ठतिदे-
हिनाम् ॥ ३८ ॥ ब्रह्मकूर्चंदहेत्सर्वंयथैवाग्निरिवेन्धनम्। प-
वित्रंत्रिषुलोकेषुदेवताभिरधिष्ठितं ॥ ३९ ॥ वरुणश्चैवगोमू-
त्रेगोमयेहव्यवाहनः। दध्निवायुःसमुद्दिष्टःसोमःक्षीरेघृते-
ही के सबवस्तु लेवे, एक पल गौमूत्र आधे अंगूठे भर गोमय॥ ३१॥ सातपल
दूध तीन पल दही एक पल घी और एक पल कुशाका जल हो ॥ ३२ ॥
गायत्री पढकर गोमूत्र ले गंधद्वारा इस मंत्रसे गोबर--आप्यायस्व इस मंत्र-
से दूध दधिक्राव्ण इससे दही ले ॥ ३३ ॥ तेजोसिशुक्र इस मंत्रसे घी दे-
वस्यत्वा इस मंत्रसे कुशाका जल--इसप्रकार ऋचासे पवित्र करेहुए पंचगव्यको
अग्निके समीप रक्खे ॥ ३४ ॥ आपोहिष्ठा इस मंत्रसे चलावें मानस्तोके इ-
स मंत्रसे मथे कमसे कम सात और जिन के, अग्रभाग हो और जो तोते
की रंगकी हैं ॥ ३५ ॥ उन कुशाओंसे उठाकर बिधिसे पंचगव्य का होम
करै इरावती—इदंविष्णु—मानस्तोके, शंवती ॥ ३६ ॥ इन ऋचाओं
से होम करै और शेष को द्विज पान करै ओंकार से ही चलाकर और
ओंकारसे मथकर ॥ ३७ ॥ और ओंकार से उठाकर--ओंकारसेही पीवे,
जो त्वचा और हाड़ोंमें देह धारियोंका पाप टिकता है ॥ ३८ ॥ उसको
ब्रह्म कूर्च इसप्रकार दग्ध करताहै जैसे आग्नि ईंधनको भस्मकरतीहै तीनों लोकोंमें
पवित्र और देवताओं से अधिष्ठित (जिसमें देवता रहें) पंचगव्य होता है
॥ ३९ ॥ गोमूत्र में वरुण—गोबरमें अग्नि—दधिमें पवन दूधमें चंद्रमा

रविः ॥ ४० ॥ पिबतःपतितंतोयंभाजनेमुखनिःसृतम्।
अपेयं तद्विजानीयाद्भुक्त्वा चांद्रायणं चरेत् ॥ ४१ ॥ कूपेच
पतितं दृष्ट्वा श्वसृगालौ च मर्कटं। अस्थि चर्मादि पति-
ताः पीत्वा मेध्या अपोद्विजः ॥ ४२ ॥ नारं तु कुणपं काकं
विड्वराहं खरोष्ट्रकं। गावयं सौप्रतीकं च मयूरं खड्गकं
तथा ॥ ४३ ॥ वैयाघ्रमार्क्षसैंहंवा कूपे यदि निमज्जति। तडा-
गस्याऽपिदुष्टस्य पीतंस्यादुदकंयदि ॥ ४४ ॥ प्रायश्चित्तं भवे-
त्पुंस: क्रमेणतेन सर्वशः। विप्रः शुद्ध्येत्त्रिरात्रेण क्षत्रिय
स्तु दिनद्वयात् ॥ ४५ ॥ एकाहेन च वैश्यस्तु शूद्रो नक्तेन
शुद्ध्यति। परपाक निवृत्तस्य परपाकरतस्यच ॥ ४६ ॥
अपचस्यचभुक्त्वान्नं द्विजश्चांद्रायणं चरेत्। अपचस्यतुय
द्दानंदातुरस्यकुतः फलं ॥ ४७ ॥ दाताप्रतिगृहीताचद्वौ-
तौनरयगामिनौ। गृहीत्वाग्निं समारोप्यपञ्चयज्ञान्ननिर्व-
पेत् ॥ ४८ ॥ परपाकनिवृत्तोसौमुनिभिः परिकीर्तितः। पं-
चीमें सूर्यका निवास कहा है ॥४०॥ जल पीते हुए मनुष्यके मुखसे निकलाहुआ
जल पात्र में गिरपड़े तो वह जल पीने के अयोग्य है यदि उसे पीले तो
चांद्रायणव्रत करै ॥ ४१ ॥ कूप में पड़े हुए कुत्ता गीदड़ बंदर हाड चर्म इन-
को देखकर और उस अशुद्ध जलको पीकर ॥ ४२ ॥ और मनुष्य
का देह कौआ विष्ठा सूकर गधा ऊंट गाय (नीलगाय) हाथी मोर गेंडा
॥ ४३ ॥ भेड़िया रीछ सिंह ये यदि कूपमें डूबजाय और निषिद्ध तालाव
का जलभी यदि पियाजाय तो ॥ ४४ ॥ सब पुरुषोंका क्रमसे यह प्रायश्चित्त
है कि ब्राह्मण तीन रात्र, क्षत्रिय दो दिनके उपवाससे शुद्ध होता है॥ ४५ ॥
वैश्य एक दिनके, उपवाससे शूद्रनक्त (रातका भोजन) से शुद्ध होता है
जो दूसरेका बनाया हुआ न खाता हो और जो खाता हो ऐसे दो प्रकार
के ॥ ४६ ॥ अपचका अन्न खाकर द्विज चांद्रायण व्रतकरै अपचको दान
जोदे उसके दाताको फल नहीं होता ॥ ४७ ॥ वोह दाता और ग्रहण क-
रनेवाला यह दोनों नरक गामी होते हैं अग्निहोत्रका नियम करके ग्रहण पंच
यज्ञ नकरै ॥ ४८ ॥ दूसरों का पकाया हुआ अन्न न खावे इसको मु-

चयज्ञान्स्वयंकृत्वापरान्नेनोपजीवति ॥ ४६ ॥ सततंप्रातरुत्थायपरपाकरतस्तुसः । गृहस्थधर्मोयोविप्रोददातिपरिवर्जितं ॥ ५० ॥ ऋषिभिर्धर्मतत्त्वज्ञैरपचः परिकीर्तितः। युगेयुगेतुयेधर्मास्तेषुतेषुचयेद्विजाः ॥ ५१ ॥ तेषांनिंदानकर्तव्यायुगरूपाहितेद्विजाः । हुंकारंब्राह्मणस्योक्त्वातूंकारंचगरीयसः ॥ ५२ ॥ स्नात्वातिष्ठन्नहः शेषमभिवाद्यप्रसादयेत् । ताडयित्वातृणेनापिकंठेबध्वापिवाससा ॥ ५३ ॥ विवादेनापिनिर्जित्यप्रणिपत्यप्रसादयेत् । अवगूर्यत्वहोरात्रंत्रिरात्रंक्षितिपातने ॥ ५४ ॥ अतिकृच्छ्रंचरुधिरेकृच्छ्रोभ्यंतरशोणिते । नवाहमतिकृच्छ्रीस्यात्पाणिपूरान्नभोजनः ॥ ५५ ॥ त्रिरात्रमुपवासःस्यादतिकृच्छ्रःसउच्यते।सर्वेषामेवपापानांसंकरेसमुपस्थिते ॥५६॥ दशसाहस्रमभ्यस्तागायत्रीशोधनंपरम् ।

इतिपराशरेधर्म्मशास्त्रेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

नियोंने इसे परपाक निवृत्ति कहा है और जोआप पांचयज्ञ करके पराये अन्नसे जीवे ॥ ४९ ॥ और निरंतर प्रातःकाल उठकर परपाकमें रतहो और गृहस्थ धर्ममें जो ब्राह्मणहो और दानसे वर्जितहो अर्थात् नले ॥ ५० ॥ धर्म तत्वके ज्ञाता ऋषियोंने उसे अपच कहाहै युग२में जो धर्महैं औरयुग२ मे जो द्विजहैं ॥५१॥ उन ब्राह्मणोंकी निन्दा नहीं करनी चाहिये क्योंकि वे ब्राह्मण युगके अनुरूपहैं अत्यन्त बड़े ब्राह्मणको हुंकार और त्वंकार (हूं वा तू) कहकर ॥ ५२ ॥ जितना दिन शेषहो उतने दिन स्नानकर बैठा रहै और नमस्कार करके प्रसन्न (राजी) करै तृणसेभी ब्राह्मणको ताड़नकर और ब्राह्मणके कंठमें वस्त्रभी बांधकर ॥ ५३ ॥ और ब्राह्मणको विद्यासे जीतकर नमस्कार करके प्रसन्न करै और झिटक कर अहोरात्र और पृथ्वीपर गिराकर त्रिरात्र उपवास ॥ ५४ ॥ और रुधिर निकालनेपर अतिकृच्छ्र—और रुधिर न निकाले तौ कृच्छ्र करे—जोनौ ९ दिनतक अंजलि भर अन्नखायाजाता है वह अति कृच्छ्र होता है ॥ ५५ ॥ वा तीन रात उपस करै उसे अति कृच्छ्र कहतेहैं यादिसब पापोंका संकर होजायतो ॥ ५६ ॥ दश हजार गायत्रीका अभ्यास परम शुद्धि करनेवाला है ॥ ५७ ॥

इतिपाराशरीयेधर्मशास्त्रे भाषाटीकायां एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

दुःस्वप्नंयदिपश्येत्तुवांतेवाक्षौरकर्मणि । मैथुनेप्रेतधूम्रे च स्नानमेवविधीयते ॥ १ ॥ अज्ञानात्प्राश्यविरामूत्रंसुरासंस्पृष्टमेवच । पुनः संस्कारमर्हंतित्रयोवर्णाद्विजातयः ॥ २ ॥ अजिनंमेखलादंडोभैक्षचर्याव्रतानिच । निवर्त्तंतेद्विजातीनां-पुनः संस्कारकर्मणि ॥ ३ ॥ विरामूत्रस्यचशुद्ध्यर्थंप्राजापत्यं समाचरेत् । पंचगव्यंचकुर्वीतस्नात्वापीत्वाशुचिर्भवेत् ॥ ४ ॥ जलाग्निपतनेचैवप्रव्रज्यानाशकेषुच । प्रत्यवासितवर्णानांकथंशुद्धिर्विधीयते ॥ ५ ॥ प्राजापत्यद्वयेनैवतीर्थाभिगमनेनच । वृषैकादशदानेनवर्णाःशुद्ध्यंतितेत्रयः ॥ ६ ॥ब्राह्मणस्यप्रवक्ष्यामिवनंगत्वाचतुष्पथे । सशिखंवपनंकृत्वाप्राजापत्यद्वयंचरेत् ॥ ७ ॥ गोद्वयंदक्षिणांदद्याच्छुद्धिं पाराशरोऽब्रवीत् । मुच्यतेतेनपापेनब्राह्मणत्वंचगच्छति ॥ ८ ॥ स्नानानिपंच पुण्यानिकीर्तितानिमनीषिभिः । आग्नेयंवारुणंब्राह्मंवायव्यं

वमन, क्षौरकर्म, मैथुन, प्रेतका धुआ, इनका स्वप्न देखे तौ स्नान कहा है ॥ १ ॥ अज्ञानसे विष्ठा, मूत्र और जिसमें मदिरा मिलीहो उसको खाकर तीनों द्विजाति फिर संस्कारके योग्य होते हैं ॥ २ ॥ द्विजातियोंके फिर (दुवारा) संस्कार कर्म में मृगछाला (मूंजकी) कोंदनी दण्ड, भिक्षाका मांगना ये सब निवृत्त होजाते हैं ॥ ३ ॥ विष्ठा और मूत्र इनको खाकर प्राजापत्य करै और पंचगव्य बनावे स्नान करके पंचगव्यको पीकर शुद्ध होता है ॥ ४ ॥ जल और अग्निमें पड़ते और संन्यास धर्मको जो नष्ट करैं उन प्रत्यवासित (धर्मसे पतित) वर्णोंकी कैसे शुद्धि कीजाय ॥ ५ ॥ दो प्राजापत्यसे तीर्थोंकी यात्रासे, ग्यारह बैलके दानसे वे तीनों (क्षत्री वैश्य शूद्र) वर्ण क्रमसे शुद्ध होते हैं ॥ ६ ॥ ब्राह्मणका प्रायश्चित्त कहता हूं वोह बनमें जाकर चौराहेमें शिखा समेत मुंडन कराकर दो प्राजापत्यव्रत करै ॥ ७ ॥ और दो गौ दक्षिणा दे यह शुद्धि पाराशर ने कही है फिर ब्राह्मण उस पापसे छूटता है और ब्राह्मण होजाता है ॥ ८ ॥ बुद्धिमानोंने पांच स्नान पवित्र कहे हैं—१ अग्नेय २ वारुण ३ ब्राह्म ४ वायव्य ५

दिव्यमेवच ॥ ९ ॥ आग्नेयंभस्मनास्नानमवगाह्यतुवारुणं। आपोहिष्ठेतिचब्राह्मं वायव्यंगोरजः स्मृतं ॥ १० ॥ यत्तुसात पवर्षेणस्नानंतद्दिव्यमुच्यते । तत्रस्नात्वातुगंगायांस्नातोभवतिमानवः ॥ ११ ॥ स्नातुंयांतंद्विजंसर्वेदेवाःपितृगणैःसह । वायुभूतास्तुगच्छंतितृषार्ताः सलिलार्थिनः ॥ १२ ॥ निराशास्तेनिवर्तंतेवस्त्रनिष्पीडनेकृते ॥ तस्मान्नपीडयेद्वस्त्रमकृत्वापितृतर्पणं ॥ १३ ॥ रोमकूपेष्ववस्थाप्ययस्तिलैस्तर्पयेत्पितॄन् ॥ तर्पितास्तेनतेसर्वेरुधिरेणमलेनच ॥ १४ ॥ अवधुनोतियः केशान्स्नात्वाप्रस्त्रवतोद्विजः । आचामेद्वाजलस्थोपिवाह्यः सपितृदेवतैः ॥ १५ ॥ शिरः प्रावृत्यकंठंवामुक्तकक्षशिखोपिवा । विना यज्ञोपवीतेन आचांतोप्यशुचिर्भवेत् ॥ १६ ॥ जलेस्थलस्थो नाचामेज्जलस्थश्च बहिःस्थिते । उभेस्पृ-

दिव्य ॥ ९ ॥ भस्मके स्नानको आग्नेय, जलकेको वारुण, आपोहिष्ठा इन तीन ऋचाकेको ब्राह्म, गौओंकी रजकेस्नान को वायव्य कहते हैं ॥१०॥ और वर्षाके समय धूपभी निकलरही हो उससमय मेघकी बूंदोंसे जो स्नानकियाजाता है उसे दिव्यकहते हैं क्योंकि उससमय स्नान करके मनुष्यको गंगाके स्नानका फल होता है ॥ ११ ॥ जिस समय द्विज स्नान करनेको जाताहो उस समय सब देवता पितरों के गण तृषासे पीडित हुए जलके लिये वायुका रूप धरकर चलते हैं ॥ १२ ॥ यदि तर्पणसे पहिले वस्त्र (धोती) निचोडडाले तौ वे निराश होकर लौट आते हैं तिससे पितरोंका तर्पण किये विना वस्त्र को न निचोड़े ॥ १३ ॥ रोमोंपर तिलोंको रखकर जो मनुष्य पितरोंका तर्पण करता है उसने रुधिर और मलसे पितर तृप्त किये ॥ १४ ॥ जो द्विज स्नान करके केशोंको कम्पाता है वा केशोंमें से जल टपकाता है और जलमें खडा वा बैठा आचमन करता है वोह मनुष्य पितर और देवताओंसे बाह्य [इनके कर्मके अयोग्य] है ॥ १५ ॥ शिर वा कण्ठको फेर कर और कक्ष [लम्बा] शिखाको खोलकर अथवा जनेऊके विना जो आचमन करता है वोह आचमन करके भी अशुद्ध होता है ॥ १६ ॥ स्थलमें बैठा मनुष्य जलमें बैठा स्थलमें आचमन न करै किन्तु दोनों जगह बैठा दोनों जगहही

ष्टवासमाचामे डुभयत्र शुचिर्भवेत् ॥ १७ ॥ स्नात्वा पीत्वा क्षते सुप्तेभुक्त्वारथ्योपसर्पणे ॥ आचांतः पुनराचामेद्वासो विपरिधायच ॥ १८ ॥ क्षुतेनिष्ठीवनेचैवदंतोच्छिष्टतथाऽनृते पतितानांचसंभाषेदक्षिणंश्रवणंस्पृशेत् ॥ १९ ॥ भास्करस्य करैः पूतंदिवास्नानंप्रशस्यते। अप्रशस्तंनिशिस्नानंराहोरन्यत्रदर्शनात् ॥ २० ॥ मरुतोवसवोरुद्रा आदित्याश्चाथदेवताः। सर्वेसोमेप्रलीयंतेतस्माद्दानंतुसंग्रहे ॥ २१ ॥ खलयज्ञेविवाहेच संक्रांतौग्रहणेतथा। शर्वर्यांदानमस्त्येवनाऽन्यत्रतुविधीयते ॥ २२ ॥ पुत्रजन्मनियज्ञेचतथाचात्ययकर्मणि। राहोश्चदर्शनेदानंप्रशस्तंनान्यदानिशि ॥ २३ ॥ महानिशातुविज्ञेयामध्यस्थंप्रहरद्वयं। प्रदोषपश्चिमौयामौदिनवत्स्नानमाचरेत्॥२४॥ चैत्यवृक्षश्चितिः यूपश्चण्डालःसोमविक्रयी। एतांस्तुब्राह्मणः

आचमन करै [अर्थात् जहां बैठा हो तहांही] तौ शुद्ध होता है ॥ १७ ॥ आचमन किये पीछे यदि स्नान करके और जल पीकर छींककर सोकर खाकर अथवा गलीमें चलकर वा वस्त्र पहन कर फिर आचमन करै ॥ १८ ॥ छींकना, दांतोंका उच्छिष्ट, अथवा झूठ बोलना, वा पतितोंके संग संभाषण करना इनमें दाहिने कान का स्पर्श करले । १९ ॥ सूर्यकी किरणों से पवित्र जोदिनका स्नान यह पवित्र और राहु के दर्शन (ग्रहण) को छोडकर रात्रिका स्नान अधम कहा है ॥ २० ॥ मरुत, आठ वसु, ग्यारह, रुद्र, और बारह सूर्य और देवता ये सब ग्रहण के समय चन्द्रमामें लीन (छिपे) होते हैं तिससे ग्रहण में दानदे ॥ २१ ॥ खलियान, विवाह, संक्राति, और ग्रहण, इनमें रात्रिमें दान कहा है अन्यत्र नहीं है ॥ २२ ॥ पुत्रका जन्म, यज्ञ, मृतकके कर्म, राहुका दर्शनइनमें रात्री को दान उत्तम कहाहै अन्य कर्ममें नहीं ॥ २३ ॥ रात्रिके बीचके दो २ पहरोंको महानिशा कहाहै इमसे प्रदोप (सूर्यास्त) के पिछले प्रहर में दिनके समान स्नान करै ॥ २४ ॥ चैत्यका वृक्ष [जिसे बौद्धके मतवाले पूजते हैं] चिता राध, चांडाल, सोमलता का वेचने वाला, इनका स्पर्श करके ब्राह्मण

स्पृष्ट्वासवासाजलमाविशेत् ॥ २५ ॥ अस्थिसंचयनात्पूर्वंरु-
दित्वास्नानमाचरेत् । अन्तर्दशाहेविप्रस्यह्यूर्ध्वमाचमनंस्मृतम्
॥ २६ ॥ सर्वंगंगासमंतोयंराहुग्रस्तेदिवाकरे । सोमग्रहेतथै
वोक्तंस्नानदानादिकर्मसु ॥ २७ ॥ कुशैःपूतंभवेत्स्नानंकुशे
नोपस्पृशेद्द्विजः । कुशेनचोद्धृतंतोयंसोमपानसमंभवेत् ॥२८॥
अग्निकार्यात्परिभ्रष्टाः संध्योपासनवर्जिताः । वेदंचैवानधी-
यानाः सर्वेतेवृषलाःस्मृताः ॥ २९ ॥ तस्माद्वृषलभीतेन
ब्राह्मणेनविशेषतः । अध्येतव्योप्येकदेशोयदिसर्वंनशक्यते ॥
॥ ३० ॥ शूद्रान्नरसपुष्टस्याधीयमानस्यनित्यशः । जपतोजुह्व
तोवापिगतिरूर्ध्वानविद्यते ॥ ३१ ॥ शूद्रान्नं शूद्रसंपर्कः
शूद्रेणतुसहासनं । शूद्राज्ज्ञानागमश्चापिज्वलंतमपिपातयेत्
॥ ३२ ॥ यःशूद्रयापाचयोन्नत्यंशूद्रीचगृहमेधिनी । वर्जितः
पितृदेवेभ्योरौरवंयातिसद्विजः ॥ ३३ ॥ मृतसूतकपुष्टांगंद्वि-

वस्त्रोंसहित स्नानकरै ॥२५॥ अस्थि संचयनसे पहिले रोकर स्नानकरै ब्राह्मणों को मरने से दशदिन वीतेपर आचमन करना कहा है ॥२६॥ जिस समय राहु सूर्य वा चन्द्रमा को ग्रसे उस समय स्नान दान आदि कर्मोंमें सब जल गंगाके समान कहे हैं ॥२७॥ स्नान कुशाओं से पवित्र होताहै और कुशासेही द्विज आचमन करै क्योंकि कुशासे उठाया जल सोमपान करनेके तुल्य होताहै॥२८॥ जो ब्राह्मण अग्निहोत्रसे भ्रष्ट और सन्ध्योपासनसे वर्जित हैं और वेदको नहीं पढते वे सब शूद्र कहे हैं ॥२९॥ इसकारण शूद्र होजानेके भयसे ब्राह्मण विशेष कर यदि सब वेदको न पढसके तौ वेदका एक देशही पढने योग्य है ॥ ३० ॥ जो ब्राह्मण शूद्रके दिये अन्नके रससे पुष्टहो प्रतिदिन अध्ययन जप, होम करते हुए भी उस ब्राह्मणको ऊर्द्ध [वैकुण्ठ] गति नहीं होती ॥ ३१ ॥ शूद्रका अन्न शूद्रका सम्पर्क (मेल) शूद्रके संग एक जगह बैठना शूद्रसे ज्ञानलेना, ये प्रतापीको भी पतित करते हैं ॥ ३२ ॥ जो द्विज शूद्रीसे भोजन बनवाताहो वा जिसकी शूद्रीस्त्रीहो वहद्विज पितर और देवताओंसे वर्जितहै और रौरव नरकमें जाताहै ॥ ३३ ॥ मृतकके सूतकसे जिसका

जंशूद्रान्नभोजिनं। अहंतन्नविजानामिकांकांयोनिंगमिष्य-
ति ॥ ३४ ॥ गृध्रोद्वादशजन्मानिदशजन्मानिशूकरः। श्वयो
नौसप्तजन्मानिइत्येवंमनुरब्रवीत् ॥ ३५ ॥ दक्षिणार्थंतुयोविप्रः
शूद्रस्यजुहुयाद्धविः। ब्राह्मणस्तुभवेच्छूद्रः शूद्रस्तुब्राह्मणोभ-
वेत् ॥ ३६ ॥ मौनव्रतंसमाश्रित्यआसीनोनवदेद्द्विजः। भुं-
जानोहिवदेद्यस्तुतदन्नं परिवर्जयेत् ॥३७॥ अर्द्धभुक्तेतुयोविप्र
स्तस्मिन्पात्रेजलंपिबेत्। हतंदैवंचपित्र्यंचआत्मानंचोपघातये-
त्॥३८॥भुंजानेषुतुविप्रेषुयोग्रेपात्रंविमुंचति।समूढःसचपापिष्ठो
ब्रह्मघ्नः सखलूच्यते ॥३९॥ भाजनेषुचतिष्ठत्सुस्वस्तिकुर्वंति-
येद्विजाः। नदेवास्तृप्तिमायांति निराशाः पितरस्तथा ॥४०॥
अस्नात्वावैनभुंजीतअजश्वाग्निमपूज्यच नपर्णपृष्ठेभुंजीत
रात्रौदीपंविनातथा ॥ ४१ ॥ गृहस्थस्तुदयायुक्तो धर्ममेवा

अंग पुष्टहो और जो शूद्रके अन्नको खाताहो मैं नहीं जानता किवह किस२
योनिमें जायगा ॥ ३४ ॥ परंतु मनुने ऐसे कहाहै किबारह जन्मगीध, दश
जन्म सूकर, सात जन्मतक कुत्तेकी योनिमें जन्म लेता है ॥ ३५ ॥ जोब्रा-
ह्मण दक्षिणाके लिये शूद्रकी हविः (साकल्य) का होम करै वह ब्राह्मण
शूद्र होताहै और वह शूद्र ब्राह्मण ॥ ३६ ॥ मौनव्रतको धरके जो द्विज बैठे
वह न बोले, और जो भोजन करता बोले वह उस अन्नको त्यागदे ॥ ३७
आधा भोजन किये पीछे जो द्विज उसी भोजनके पात्रमें जल पीवे उसका देवता
ओंका और पितरोंका कर्म नष्टहै और वह अपने आत्माकोभी नष्टकरताहै॥३८॥
जो ब्राह्मणोंके भोजन करते हुए पहिले पात्रको छोड़ता (खड़ा होता) है
वह मूढ बड़ा पापी और ब्रह्म हत्यारा कहाहै ॥ ३९ ॥ भोजन करते हुए
जो ब्राह्मण स्वस्ति (कल्याणहो) कहतेहैं उसपर देवता तृप्त नहीं होते
और पितरभी निरास होजातेहैं ॥४०॥ बिना स्नान किये, और बिना अ-
ग्निके पूजे, भोजन न करै और पत्तेकी पीठपर और रात्रिमें दीपकके बिना
भोजन नकरै ॥ ४१ ॥ दया वाला गृहस्त धर्मकीही चिन्ता करैं अपने पो-
ष्ये वर्ग (पुत्र वा भृत्य आदि) इनके प्रयोजनकी सिद्धिके लिये बुद्धिमान

नुचिंतयेत् । पोष्यवर्गार्थसिद्ध्यर्थंन्यायवर्त्तीसुबुद्धिमान् ॥ ४२ ॥ न्यायोपार्जितवित्तेन कर्त्तव्यंह्यात्मरक्षणम् । अन्यायेनतुयोजीवेत्सर्वकर्मबहिष्कृतः ॥ ४३ ॥ अग्निहोत्रीचकपिलासत्री राजा-भिक्षुर्महोदधिः । दृष्टमात्राःपुनंत्येते तस्मात्पश्येत्तु नित्यशः ॥ ४४ ॥ अरणिंकृष्णमार्जारंचंदनंसुमणिंघृतं । तिलान्कृष्णा-जिनंछागं गृहेचैतानिरक्षयेत् ॥ ४५ ॥ गवांशतंसैकवृषंयत्र-तिष्ठत्ययंत्रितं । तत्क्षेत्रं दशगुणितंगोचर्मपरिकीर्तितं ॥ ४६ ॥ ब्रह्महत्यादिभिर्मर्त्यो मनोवाक्कायकर्मभिः । एतद्गोचर्मदाने-नमुच्यतेसर्वकिल्बिषैः ॥ ४७ ॥ कुटुंबिनेदरिद्रायश्रोत्रियायविशेषतः । यद्दानंदीयतेतस्मैतद्दानं शुभकारकं ॥ ४८ ॥ वापिकूपतडागाद्यैर्वाजपेयशतैर्मखैः । गवांकोटिप्रदानेनभूमिहर्तानशुद्ध्यति ॥ ४९ ॥ अष्टादशदिनादर्वाक्स्नानमेवरजस्व

सदैव न्यायसे वर्त्ते ॥ ४२ ॥ न्यायसे संचय किये द्रव्यसे अपनी रक्षा करनी जो अन्यायसे जीता है वह सब धर्मोंसे बाहर (अनधि कारी) है ॥ ४३ ॥ अग्निकी चिन्ति (होम) जो करै, कपिलागौ, यज्ञ करने वाला राजा, भिक्षुक, समुद्र, ये देखनेसेही पवित्र करते हैं तिससे इनको नित्य देखै ॥ ४४ ॥ अरणि, काला बिलाव, चंदन, उत्तम मणि, घी, तिलकाली मृगछाला, बकरी, इनकी घरमें रक्षा करै ॥ ४५ ॥ जहां सौगौ और एक बैल ये दशगुने अर्थात् दश हजार गौ और दशबैल, बिना बांधे टिकें उस क्षेत्रको गोचर्म कहते हैं ॥ ४६ ॥ इस गोचर्म मात्र भूमिके दानसे मनुष्य मन बाणी देह और कर्मोंसे किये ब्रह्म हत्या आदि पापोंसे छूटता है ॥ ४७ ॥ कुटुंबी, दरिद्र, विशेषकर, वेदपाठी इनको जो दान दिया जाता है वही शुभका करने वाला है ॥ ४८ ॥ भूमिका हरने वाला मनुष्य बावड़ी–कूप तालाब आदि से और सौ १००वाजपेय यज्ञों से और कोटि गौ देनेसे भी शुद्ध नहीं होता ॥ ४९ ॥ यदि जो दर्शन से अठारवें दिन से पहिले आगे कहे चांडाल आदि का स्पर्श रजस्वला स्त्री करै तौ स्नान ही करै और अठारह दिन से आगे तीनरात उपवास करै यह उशना मुनिने

ला । अतऊर्ध्वंत्रिरात्रंस्यादुशनामुनिरब्रवीत् ॥ ५० ॥ युग युगद्वयंचैवत्रियुगंचचतुर्युगम्। चांडालसूतकोदक्यापतितानामधःक्रमात् ॥ ५१ ॥ ततःसन्निधिमात्रेणसचैलंस्नानमाचरेत् । स्नात्वावलोकयेत्सूर्यमज्ञानात्स्पृशतेयदि ॥ ५२ ॥ विद्यमानेषुहस्तेषुब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः । तोयंपिबतिवक्त्रेणश्वयोनौ जायते ध्रुवं ॥ ५३ ॥ यस्तु क्रुद्धःपुमान्ब्रूयाज्जायां यस्तु अगम्यतां । पुनरिच्छतिचेदेनां विप्र मध्येतु श्रावयेत् ॥ ५४ ॥ श्रांतःक्रुद्धस्तमोंधोवा क्षुत्पिपासा भयार्दितः । दानं पुण्यमकृत्वावाप्रायश्चित्तं दिनत्रयम् ॥ ५५ ॥ उपस्पृशेत्रिषवणं महानद्युपसंगमे । च[illegible]तिचैवगांदद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेद्दश ॥ ५६ ॥ दुराचारस्यविप्रस्यानिषिद्धाचरणस्य च । अन्नं भुक्त्वाद्विजः कुर्याद्दिनमेकमभोजनं ॥ ५७ ॥ सदाचारस्य विप्रस्य तथावेदांग वेदिनः । भुक्त्वान्नं मुच्यते

कहा है ॥ ५० ॥ यदि चार दिन आठ दिन बारह दिन सोलह दिन क्रमसे चांडाल सूतिका रजस्वला पतित रजस्वला इनके ॥ ५१ ॥ समीप रहै तौ वस्त्रों सहित स्नान और यदि अज्ञानसें स्पर्श भी करले तौ स्नान करके सूर्य का दर्शन करै ॥ ५२ ॥ हाथोंके विद्यमान रहते जो अज्ञानी ब्राह्मण पात्रमें मुख लगाकर जल पीता है वह निश्चय करके कुत्ताकी योनि में पैदा होताहै॥५३॥ जो मनुष्य क्रोध में आकर अपनी स्त्रीको ऐसा कहै तू मेरे गमन करने के योग्य नहीं है और फिर उस स्त्रीकी इच्छा करै तो इसवातको ब्राह्मणोंको सुना दे ॥ ५४ ॥ थका—वा क्रोधी अज्ञानसे अन्धा भुखा और प्याससे दुःखी वह ब्राह्मण दान और पुण्य न करै तो तीन दिन प्रायश्चित्त करै ॥ ५५ ॥ और त्रिकाल महानदी [गंगाआदि] के संगम (मेल) में स्नान और आचमन करै और प्रायश्चित्त किये पीछे तिकाल गोदान करै और दश ब्राह्मण जिमावे ॥ ५६ ॥ दुराचारी और निषिद्ध आचरण के करनेवाले ब्राह्मण के अन्नको खाकर द्विज एक दिन भोजन न करै ॥ ५७ ॥ उत्तम आचरण का कर्त्ता और वेदांत का जाननेवाला ब्राह्मण के अन्न को खाकर मनुष्य अहो-

पापादहोरात्रांतरान्नरः ॥५८॥ ऊर्ध्वोच्छिष्टमधोच्छिष्ट मन्त-
रिक्षमृतौतथा। कृच्छ्रत्रयं प्रकुर्वीत आशौच मरणेतथा॥५९॥
कृच्छ्रं देव्ययुतं चैव प्राणायामशतद्वयं। पुण्यतीर्थेनार्द्रशिराः
स्नानं द्वादशसंख्यया ॥६०॥ द्वियोजनं तीर्थयात्रा कृच्छ्रमेकं
प्रकल्पितम्। गृहस्थः कामतः कुर्याद्रेतसः स्खलनं यादि ॥६१॥
सहस्रंतुजपेद्देव्याः प्राणायामैस्त्रिभिःसह । चतुर्विद्योपपन्न-
स्तु विधिवद्ब्रह्मघातके ॥ ६२ ॥ समुद्रसेतु गमनं प्रायश्चित्तं
समादिशेत्॥६३॥सेतुबंधपथेपथेभिक्षांचातुर्वर्ण्यात्समाचरेत्।
वर्जयित्वा विकर्मस्थान् छत्रोपानहवर्जितः । अहंदुष्कृत-
कर्मावै महापातककारकः ॥ ६४ ॥ गृहद्वारेषु तिष्ठामि भि-
क्षार्थीब्रह्मघातकः । गोकुलेषु वसेच्चैव ग्रामेषु नगरेषुच॥६५॥
तपोवनेषुतीर्थेषु नदी प्रस्रवणेषुच । एतेषुख्यापयेन्नेनः
पुण्यं गत्वातु सागरं ॥ ६६ ॥ दशयो जन विस्तीर्णं शतयो-

रात के अन्तर में पाप से छूटता है ॥ ५८ ॥ ऊर्ध्व [बड़े] के उच्छिष्टको वाअधः (छोटे) के उच्छिष्टको और अन्तरिक्ष में जो मरै उसके अशौचके अन्नको और मृतकके अशौचभोजनको खाकर तीन कृच्छ्रव्रत करै ॥ ५९ ॥ दश हजार गायत्री–दोसै २०० प्राणायाम–और पवित्र तीर्थ में बारह बार शिर भिगोकर स्नान, ये एक कृच्छ्रका फल देते हैं ॥ ६० ॥ और दो योजन तक तीर्थकी यात्राको भी एक कृच्छ्र माना है–यदि गृहस्थी पुरुष अपने वीर्य को गिराता है ॥ ६१ ॥ वह तीन प्राणायाम करै और एक हजार गायत्री जपै–विधि से जो चारों विद्याओं से युक्त हो और ब्रह्महत्या करै तो ॥ ६२ ॥ उसे सेतुबंधरामेश्वर पर जाना प्रायश्चित्त बतावे और वह सेतुबंधके मार्ग में चारों वर्णों से भिक्षा मांगे ॥ ६३ ॥ कुमार्गियोंको छोड़ दे और छत्री जूता न रक्खै–और ऐसे कहै कि मैं खोटे कर्मका करनेवाला और महा पातकीहूं ॥६४॥ मैं ब्रह्महत्यारा भिक्षाके लिये तुम्हारे घरके द्वारपर खड़ा हूं और गोशाला ग्राम नगर इनमें बसे॥ ६५ ॥ तपोवनोंमें तीर्थोंमें नदीके जहां प्रवाह हों वहां इन में अपने पापको जताता हुआ पवित्र सागर पर जाकर॥ ६६ ॥ दश योजन

जन मायतं। रामचन्द्र समादिष्टं नल संचय संचितं॥६७॥ सेतुंदृष्ट्वासमुद्रस्य ब्रह्महत्यांव्यपोहति। सेतुंदृष्ट्वाविशुद्धात्मात्ववगाहेतसागरं॥ ६८ ॥ यजेतवाश्वमेधेनराजातुपृथ्वीपातिः। पुनः प्रत्यागतोवेश्मवासार्थमुपसर्पति ॥ ६९ ॥ सपुत्रः सहभृत्यश्चकुर्याद्ब्राह्मणभोजनं। गाश्चैवैकशतंदद्याच्चातुर्विद्येषुदक्षिणां ॥ ७० ॥ ब्राह्मणानांप्रसादेन ब्रह्माहातु विमुच्यते विंध्यादुत्तरतोयस्यसंवासःपरिकीर्तितः ॥७१॥ पराशरमतंतस्यसेतुवंधस्यदर्शनात्। सवनस्थांस्त्रियंहत्वा ब्रह्महत्याव्रतंचरेत् ॥ ७२ ॥ सुरापश्चद्विजः कुर्यान्नदींगत्वासमुद्रगां। चांद्रायणेततश्चीर्णे कुर्याद्ब्राह्मणभोजनं ॥ ७३ ॥ अनडुत्सहितांगांच दद्याद्विप्रेषुदक्षिणां। सुरापानंसकृत्कृत्वाअग्निवर्णांसुरांपिबेत् ॥ ७४ ॥ सपावयेदिहात्मान मिहलोकेपरत्रच। अपहृत्यसुवर्णंतु ब्राह्मणस्यततः स्वयं॥ ७५॥ गच्छे-

चौड़ा और सौ योजन लंबा रामचन्द्रजीके कहने से नलबानरके बनाये हुए ॥ ६७ ॥ समुद्रके सेतुको देखकर ब्रह्महत्याको दूरकरता है सेतुको देख विशुद्ध मन होकर सागरमें स्नान करै ॥ ६८ ॥ और पृथ्वीका पति राजा ब्रह्महत्या करै तो अश्वमेध यज्ञ करै फिर लौटकर घरमें वास करने के लिये आवे ॥ ६९ ॥ पुत्र और भृत्यों समेत ब्राह्मणोंको जिमावे और चार विद्यावाले ब्राह्मणोंको सौ १०० गौ दक्षिणा दे ॥ ७० ॥ ब्राह्मणोंकी प्रसन्नता से ब्रह्महत्या से छूटजाता है विन्ध्याचल से उत्तर जो वसता है ॥ ७१ ॥ उसे पाराशर ऋषिने सेतुबंध का दर्शन कहा है—प्रसूति में, टिकी स्त्रीको मार कर ब्रह्महत्यामें कहेहुए व्रतको करै॥७२॥मदिरा पीनेवाला द्विज समुद्रमें जाने वाली नदीपर जाकर चांद्रायण व्रत करके ब्राह्मणोंको जिमावे ॥ ७३ ॥ एक बैल सहित एक गौ ब्राह्मणोंको दक्षिणा दे—एक बार मदिराको पीकर अग्नि के समान हैं रंग जिसका (अत्यन्त उष्ण) ऐसी मदिराको जो पीवे॥७४॥ वह इस लोक और परलोक में अपने आत्माको पवित्र करै ब्राह्मणके सुवर्णको चुराकर आपही ॥ ७५ ॥ मूसलको अपने मारनेके लिये लेकर राजा

न्मुशलमादाय राजानंस्ववधायतु॥ततःशुद्धिमवाप्नोतिराज्ञाऽ-
सौमुक्तएवच ॥ ७६ ॥ कामतस्तुकृतंयत्स्यन्नान्यथावधम-
र्हति। आसनाच्छयनाद्यानात्संभाषात्सहभोजनात् ॥ ७७ ॥
संक्रामंतीहपापानितैलविंदुरिवांभसि चांद्रायणंयावकंचतुला
पुरुषएवच ॥ ७८ ॥ गवांचैवानुगमनं सर्वपापप्रणाशनं ।
एतत्पाराशरंशास्त्रंश्लोकानांशतपंचकम् ॥ ७९ ॥ द्विनव-
त्यासमायुक्तंधर्मशास्त्रस्यसंग्रहः। यथाध्ययनकर्माणिधर्मशा-
स्त्रमिदंतथा ॥८०॥ अध्येतव्यंप्रयत्नेन नियतंस्वर्गकामिना ।

इतिश्री पाराशरेधर्म्मशास्त्रेसकलप्रायश्चित्त
निर्णयोनामद्वादशोऽध्यायः॥१२॥

के समीप जाय—फिर राजा से मर कर यह शुद्ध होता है और मुक्तिको भी प्राप्त होता है ॥ ७६ ॥ यदि जानकर करा होय वो मारनेके योग्य है अन्यथा नहीं है—एक जगे आसन से—सोने से—गमन से बोलने से संग भोजन से ॥७७॥ इस प्रकार पाप लगते हैं जैसे जल में तेलकी बूंद—चांद्रायण—यावक (जौंको ही खाना) और तुलापुरुष ॥ ७८॥ गौओं के पीछे गमन—ये सब पापोंको नाश करनेवाले हैं यह पराशर ऋषिका कहा धर्मशास्त्र जिस में पांचसौ ५०० ॥७९॥ बानवे ९२ श्लोकहैं और धर्मशास्त्रका यह संग्रह (इकट्ठा करना) है जैसे अध्ययन के कर्म हैं ऐसाही यह धर्मशास्त्र है ॥ ८० ॥ स्वर्गकी इच्छा करनेवाले पुरुषको यह यत्न से पढ़ना चाहिये ॥

इतिश्री पाराशरीये धर्मशास्त्रे सकलप्रायश्चित्तनिर्णयो नामद्वादशोऽध्यायः।

समाप्तोऽयंग्रन्थः।